ग्रामीण पाठकों के लिए

1857 का संग्राम

वि. स. वालिंबे

अनुवाद

विजय प्रभाकर

चित्र

सैबाल चटर्जी



नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया

ISBN 81-237-3383-6

प्रथम संस्करण : 2000 (*शक* 1922)

Atharashe Sattawanchi Sangramgatha (Original Marathi)

1857 Ka Sangram (Translation in Hindi)

रु. 11.00

निदेशक, नेशनल बुक ट्रस्ट, इंडिया, ए-5 ग्रीन पार्क, नयी दिल्ली-110 016 द्वारा प्रकाशित

आक्रोश की उत्पत्ति

क़िसी दिन की शुरुआत ही कुछ ऐसी होती है कि होनी की अनहोनी और अनहोनी की होनी हो जाती है। सब कुछ अजीब और अद्भुत दिखने लगता है। उस दिन विशेष का महत्व वाकई इतिहास में अजर-अमर हो जाता है।

हिंदुस्तान के इतिहास में 10 मई 1857 का दिन एक ऐसा ही दिन था, जो हमेशा याद रहेगा।

आजादी की लड़ाई का वह एक जोशीला दिन था। उस दिन के चौबीस घंटों में आजादी की पहली लड़ाई की बहादुरी का दर्शन हुआ। दिल्ली के पास मेरठ में उस दिन असंतोष की आग भड़क उठी। उस जनविद्रोह की आग ने गंगा-जमुना के सारे इलाके को लपेट में ले लिया।

मेरठ में जो घटित हुआ, वह अचानक नहीं हुआ था। वर्ष 1857 की शुरुआत में ही आगरा और अवध के इलाकों में लोग चमत्कारिक बेचैनी महसूस कर रहे थे। ईस्ट इंडिया कंपनी के लिए इस वर्ष का महत्व विशेष रहा। इस कंपनी की स्थापना सन् 1600 में हिंदुस्तान और इंग्लैंड के बीच व्यापार बढ़ाने के उद्देश्य से की गयी थी। शुरुआती दौर में कंपनी ने सूरत, कलकत्ता आदि बंदरगाहों में अपने माल-गोदाम खोले।

बादशाह जहांगीर की इजाजत से कंपनी के आयात-निर्यात

कारोबार में जान आ गयी। 1707 ई. में औरंगजेब की मृत्यु के बाद मुगल सल्तनत का रोब धीरे-धीरे खत्म होता गया। इससे कंपनी को अच्छा फायदा हुआ। उनको अपना कारोबार बढ़ाने में आसानी हुई। कंपनी ने अपना ठिकाना बंगाल में जमा लिया था। कलकत्ता अब कंपनी का प्रधान दफ्तर बन गया।

1757 ई. में कलकत्ता के पास प्लासी में बंगाल के नवाब सिराजुद्दौला और कंपनी के बीच युद्ध हुआ। नवाब यह लड़ाई हार गया। कंपनी के हौसले अब बढ़ गये। कंपनी के आलाकमान की लालसा बढ़ गयी। केवल बंगाल ही नहीं, बल्कि पूरा हिंदुस्तान निगलने की महत्वाकांक्षा पैदा हो गयी।

अगले सौ सालों के भीतर कंपनी ने साम, दाम, दंड और भेद की नीति अपनाकर पूरे देश पर कब्जा कर लिया। 23 जून 1857 को विजय दिवस की शताब्दी मनाने की योजना तय हुई। अचानक उसी दिन आगरा और अवध में 'चपाती मुहिम' शुरू हो गयी। कंपनी के विभिन्न कचहरियों में डर का साया फैल गया। कंपनी ने भरसक प्रयास किये, लेकिन मुहिम का राज खुल नहीं सका। चपाती मुहिम की अंदर की बात कंपनी समझ नहीं पा रही थी। आखिर यह चपाती मुहिम कौन और क्यों चला रहा है ?

कंपनी के लोगों में कानाफूसी होने लगी। हिंदुस्तानी जनता में अंग्रेजी राज के खिलाफ असंतोष भड़क रहा था। मथुरा का कलेक्टर मार्क टॉर्नहिल बेफिक्र था। वह स्वयं को बहादुर अधिकारी समझता था। वह सबसे कहने लगा, "चपाती मुहिम सभी जगहों पर फैल गयी है। यह सब कौन कर रहा है, यह मैं खोज निकालूंगा। मैं इस मुहिम की जड़ उखाड़ फेकूंगा।"

चपाती मुहिम जनवरी 1857 में शुरू हुई थी। अब मार्च गुजर

चुका था। मथुरा क़ी कचहरी में अब तक चपाती का दर्शन नहीं हुआ था। टॉर्नहिल खुश था। उसे लगा कि उसके साथियों को डरानेवाला यह सिलसिला अब खत्म हो गया है।

अचानक एक दिन कचहरी में हादसा हुआ। जो डर था,वही हो गया। टॉर्नहिल के मेज पर हथेली के आकार की चार चपातियां कतार से रखी हुई थीं। यह नजारा देखकर टॉर्नहिल का पसीना छूट गया। उसने यह खबर तुरंत आगरा के कमिश्नर जॉर्ज हार्वे को पहुंचा दी। हार्वे ने जान लिया कि अब आगरा भी सुरक्षित नहीं रह गया। मथुरा की तरह अन्य जगहों से भी यही समाचार प्राप्त होने लगे। यह देखकर टॉर्नहिल की तरह हार्वे भी चौंक गया। उसने समझ लिया कि इस मामले में लापरवाही नहीं होनी चाहिए। अब चुप रहना मुश्किल था। हार्वे ने सभी दिशाओं की ओर अपने आदमी भेज दिये। उनको मुहिम के सूत्रधार की तलाश का काम सौंपा गया। उसे विश्वास था कि इसका भेद जल्द ही खुल जायेगा। लेकिन उसके आदमी खाली हाथ लौट आये। हार्वे ने कलकत्ता के गवर्नर लॉर्ड कैनिंग को खत लिखा-

''आजकल कचहरियां खोलते ही वहां किसी अज्ञात व्यक्ति द्वारा रखी तीन-चार चपातियां नजर आती हैं। इस घटना की पूरी जांच की, लेकिन कोई सुराग नहीं मिला। लगता है कि ये चपातियां रातोंरात डेढ़-दो सौ मील का फासला तय करती हैं। जगह-जगह आदमी लगा दिये हैं। हमारे इलाके में इस चपाती मुहिम ने हो-हल्ला मचा दिया है।''

कैनिंग भी उलझन में पड़ गया। आगरा-दिल्ली से लेकर लखनऊ-कानपुर तक इस मुहिम से खलबली मच गयी। उसने महसूस किया कि इस मुहिम के पीछे चल रही साजिश का पर्दाफाश करना चाहिए।

गवर्नर जनरल से आदेश मिलते ही जवाबतलबी शुरू हो गयी। इस संदेह के घेरे में खुद बादशाह बहादुरशाह जफर भी आ गये। बयासी वर्ष के बूढ़े बादशाह ने कानों पर हाथ रखे और बोले, "यह बिलकुल अजीब किस्सा है। मैने जिंदगी में पहली बार यह सुना है।"

गवर्नर जनरल के चेहरे का रंग पीला पड़ गया। चपाती के साथ अब लाल कमल का सिलसिला भी चल निकला। कमल का फूल देनेवाला और लेनेवाला, दोनों ऊंचे सुर में कहने लगे, "सब कुछ लाल हो जायेगा।" इसका मतलब अब लड़ाई की तैयारी शुरू हो गयी है। न जाने अब कौन-सी आफत आनेवाली है ? इस डर से कैनिंग के साथ कंपनी के आला अफसर भी परेशान हो गये।

अचानक एक दिन चपाती का यह तूफान थम गया। फिर भी इस मुहिम की जांच जारी रही। मुहिम का खुलासा कोई नहीं कर सका। मुहिम की बात को लेकर अनेक किंवदंतियां फैलीं और चर्चाओं का दौर चलता रहा। किसी बात पर भरोसा नहीं किया जा सकता था। इन चर्चाओं में कोई तालमेल नहीं था।

किसी ने नाना साहब पेशवा का भी जिक्र किया। नाना साहब अंतिम पेशवा बाजीराव द्वितीय के दत्तक पुत्र थे। नाना साहब को उम्मीद थी कि उनके पिताजी की तरह उन्हें भी सालाना पेंशन मिलेगी। परंतु कंपनी सरकार की नीति में कुछ परिवर्तन हो गये थे। अब राजाओं के सिर्फ जिस्मानी बच्चों को ही वारिस माना जाने का निर्णय हुआ था। अब दत्तक पुत्र को वारिस होने का अधिकार नहीं रहेगा। इसलिए कंपनी ने नाना साहब की अर्जी ठुकरा दी थी। नाना साहब ने अनेक अधिकारियों को दलीलें दीं, लेकिन कंपनी ने अपना रुख नहीं बदला। नाना साहब ने आखिर अपने वकील अजीमुल्ला खां को लंदन भेजा। वहां से भी अजीमुल्ला को खाली हाथ लौटना पड़ा।

कंपनी सरकार ने बाजीराव द्वितीय को कानपुर के पास बिठूर गांव में लाकर रख दिया था। काम के निमित्त नाना साहब बार-बार बिठूर जाते थे। उन्हें जब भी सुविधा होती, वहां के दासबुवा के मठ हो आते थे। एक दिन नाना साहब ने दासबुवा के सामने दिल की बात कही। बैरागी दासबुवा ने धुनी में हाथ डाला। धुनी से कुछ सेंकी हुई चपातियां निकालीं। मूर्ति पर चढ़ाये गये फूलों से कुछ कमल के फूल बटोरे। और नाना साहब के हाथों में यह प्रसाद देते हुए उन्होंने आशीर्वाद दिया, "नाना साहब, यह प्रसाद स्वीकार करें। इन चपातियों और फूलों को लेकर प्रस्थान करें। जहां तक आप इनको ले जायेंगे; वह भूमि आपकी हो जायेगी। आपके भाग्य में राजयोग है।"

कानपुर के आसपास यह किस्सा हरेक की जबान से सुनने को मिला। पिछले सौ सालों में कंपनी ने अनेक सूबेदारों और राजाओं की रियासतें हथियाकर सबको सामंती प्रभु बना दिया था। लेकिन कंपनी ने अब तक उनके सिंहासन को हाथ नहीं लगाया था। अब माहौल पूरी तरह बदल चुका था। कंपनी ने रियासतों का राज समाप्त करने का एक बहाना ढूंढ़ लिया। धीरे-धीरे पूरा इलाका अपने कब्जे में लेकर कंपनी आगे बढ़ रही थी।

रियासतदारों के साथ उनकी प्रजा भी कंपनी के इरादों पर संदेह करने लगी। उन लोगों के मन में यह डर पनपने लगा कि हमारा स्वराज अब खतरे में पड़ गया है। घमंडी अफसरों ने इस बदलते माहौल को नजरअंदाज किया था।

जनमानस में विदेशी राज के प्रति विद्रोह बढ़ रहा था। कंपनी को अपनी सेना पर पूरा भरोसा था। उसे मालूम हो गया था कि कोई भी रियासत कंपनी से मुकाबला नहीं कर सकती। कंपनी के पास तीन लाख सिपाहियों की फौज तैयार थी। इतनी ताकत अब किसी

राजा के पास कहां बची थी? कंपनी के इन तीन लाख सिपाहियों में अंग्रेज सिपाहियों की संख्या सिर्फ पंद्रह हजार थी। कंपनी को अपने अनुभवों से मालूम हो गया था कि बाकी सभी देसी सिपाहियों पर उनका रौब चलता है। कंपनी सरकार को यह मालूम होने में बहुत समय लगा कि देसी सिपाही अब उनके प्रति बिफर गये हैं।

प्रजा भी जान गयी थी कि हमारा स्वराज खतरे में पड़ गया है। देसी सिपाहियों में स्वधर्म पर मंडरा रहे संकट के विचारों से असंतोष बढ़ रहा था। कंपनी अब तक पुरानी 'ब्राउन बेस' बंदूकों का प्रयोग कर रही थी। 1857 के शुरुआत से ही लश्करी (सैनिक) थाने पर नयी बंदूकें मंगायी जाने लगीं। इन नयी बंदूकों की खासियत यह थी कि वह दूर का निशाना लगा सकती थीं। इंग्लैंड के एनफिल्ड में तैयार होने के कारण उसी नाम से बंदूक का नाम मशहूर हो गया था। हिंदुस्तान में दमदम और अंबाला शहर में भी इस बंदूक का निर्माण कार्य शुरू किया गया। लेकिन उसका पुराना नाम 'एनफिल्ड' ही बरकरार रहा।

इस एनफिल्ड बंदूक में कारतूस भरने के लिए उसके ऊपरी हिस्से पर चरबी लगायी जाती थी और यह चरबी दांतों से निकाली जाती थी। कभी-कभी चरबी का टुकड़ा मुंह में आ जाता था। देसी सिपाहियों में यह बात फैल गयी कि यह चरबी गाय अथवा सूअर से निकाली जाती है। फिर तो सारा माहौल ही बदल गया। सिपाहियों में असंतोष की ज्वाला भड़क उठी। हिंदुओं में गाय पूजनीय होती है, इसके विपरीत मुस्लिमों में सूअर नापाक।

हमारा धर्म भ्रष्ट करवाकर हमें ईसाई धर्म स्वीकार करने के लिए सरकार मजबूर कर रही है, इसीलिए नयी बंदूकें लायी गयी हैं - यह धारणा देसी सिपाहियों के मन में पक्की हो गयी।

लगभग उन्हीं दिनों क्रीमिया में रूस और इंग्लैंड के बीच युद्ध हुआ था। इस लड़ाई की खबरें दिल्ली तक पहुंचने लगीं। दिल्ली के आसपास के साधु, बैरागी और मौलवी, फकीर आदि यात्रा करते हुए गांवों में पहुंच जाते। वहां गांववासियों को समझाते कि "इस युद्ध में इंग्लैंड की विजय हुई है। लेकिन फिरंगियों के असंख्य सैनिक मारे गये हैं। हजारों अंग्रेज महिलाएं विधवा हो गयी हैं। सरकार संकट में पड़ गयी है। अब इन विधवाओं का क्या करें? कुछ अधिकारियों ने इन विधवाओं को हिंदुस्तान भेजने की सलाह दी है। उनकी सलाह के अनुसार अब इन विधवाओं की शादी हिंदुस्तान के सरदार, रियासतदारों के लड़कों से रचायी जायेगी। इन विवाहों के बाद उनकी संतति ईसाई बन जायेगी। इसका सीधा लाभ ईसाई धर्म को मिलेगा। अब आनेवाले दिनों में हिंदुस्तान के सभी रियासतों पर ईसाई धर्मावलंबी लोगों का वर्चस्व बढ़ जायेगा।"

इस प्रचार के फलस्वरूप जनता में विचार मंथन होने लगा। अब इस संकट का मुकाबला कैसे किया जाये ? गांवों और फौजी बैरकों में फैलकर यह चर्चा अब अंग्रेज अफसरों के बंगलों तक पहुंचने लगी। अंग्रेज महिला वर्ग में चिंता का माहौल पैदा हो गया।

अंग्रेज पुरुष वर्ग घर में कहने लगे, "बगावत की बातें करना आसान है, लेकिन बगावत करना इतना आसान नहीं है। देसी सिपाहियों का यह बकवास है। अगर वे बगावत करेंगे तो न घर के रहेंगे न घाट के। बड़े साहब के सामने उनका कोई बस नहीं चलेगा। सबको अपनी नौकरी से हाथ धोना पड़ेगा। डरने की कोई बात नहीं है।"

कुछ अंग्रेज अफसर अपने ही भाइयों से नाराज हुए। हिंदुस्तानी लोगों के बारे में कंपनी सरकार बेफिक्र थी। सर चार्ल्स नेपियर को

यह नजरिया बिलकुल पसंद नहीं आया। उन्हें हिंदुस्तान की पूरी जानकारी थी। उन्होंने इस देश और जनता को करीब से देखा था। इसलिए उन्होंने कहा, "जब कभी असंतोष की ज्वाला भड़क उठेगी, तब उसे बुझाना आसान नहीं होगा। आसमान टूट पड़ेगा, तभी आपको असलियत का पता चलेगा। इस असंतोष का चेहरा भयानक हो सकता है।"

फ्रेडरिक शोअर ने भी इसी बात की ओर इशारा किया था। कलकत्ता से प्रकाशित 'इंडिया गजट' में उसने लिखा -

"कंपनी सरकार ने यहां के लोगों पर अपने कारोबार से धाक जमा लिया है। सरकार का अनुशासन प्रशंसनीय है। इसके बावजूद यहां के लोग कंपनी सरकार की सत्ता स्वीकार नहीं करेंगे। वे इस सरकार को विदेशी हुकूमत के नजरिये से देखते हैं। इस सच्चाई को हमें जान लेना चाहिए।"

इस तरह के समाचार पढ़कर जनरल हिअर्सी बेकाबू हो जाता था। वह अंगारे बरसाकर कहता, "मैं यह स्वीकार करता हूं कि नयी बंदूकों से देसी सिपाही नाराज हुए हैं, लेकिन सिर्फ इस बात को लेकर कोई विद्रोह नहीं कर सकता। वे सब कंपनी सरकार को मां-बाप मानते हैं। मुझे इस बात पर पक्का भरोसा है।"

कोई कंपनी सरकार के पक्ष में बोल रहा था, तो कोई देसी सिपाहियों के पक्ष में।

वह 29 मार्च का दिन था। रविवार की छुट्टी। बैरकपुर की छावनी में सभी तरफ सन्नाटा छाया हुआ था। किसी भी तरह की चहल-पहल नहीं थी। रविवार की रात में नशीला बॉल डांस हुआ था। हिअर्सी की आंखों में रात का खुमार शेष था। वह अपने कार्यालय में डाक देख रहा था। कलकत्ता से प्राप्त एक पत्र ने उसका ध्यान खींच लिया।

उसमें लिखा था - "विभिन्न स्थानों से समाचार मिल रहे हैं। देसी सिपाहियों में असंतोष बढ़ रहा है। बहरामपुर में कोई हादसा हुआ है। हमें छावनी के हर सिपाही पर कड़ी नजर रखनी चाहिए।"

यह पत्र पढ़कर हिअर्सी को हंसी आ गयी। वह अपने आपसे बुदबुदाया, "हमारा बैरकपुर तुम्हारे बहरामपुर जैसा नहीं है। कलकत्ता के इन विद्वानों को कोई यह समझाये।"

एक दिन हिअर्सी आराम फरमा रहा था। तभी एक अंग्रेज सिपाही दौड़ते हुए अंदर आया। उसने खबर दी, "सर, एक देसी सिपाही पागल हो गया है। वह कुछ भी हरकत कर सकता है। मैदान के बीचोंबीच खड़ा होकर सिपाहियों को भड़का रहा है। इस वक्त वह कुछ भी कर सकता है।"

हिअर्सी चौंक गया। उसकी पलटन में उसके दो जवान लड़के भी भर्ती हुए थे। उसने लड़कों को पुकारा, "चलो, जल्दी तैयार हो जाओ। हमें तुरंत परेड ग्राउंड पर पहुंचना है।" हिअर्सी दोनों लड़कों के साथ परेड ग्राउंड पर जा पहुंचा। वह मैदान का दृश्य देखकर दंग रह गया। होश संभालकर उसने पूछा, "इस सिपाही का नाम क्या है?"

"मंगल पांडे!" जवाब मिला।

बैरक के सामने खड़ा होकर वह अपने साथियों का आह्वान कर रहा था- "लड़ाई के लिए तैयार हो जाओ। कल रात हमने फैसला किया है। क्या आप यह बात भूल गये हैं?"

इस आह्वान के बावजूद देसी सिपाही अपनी जगहों पर शांत खड़े रहे। यह देखकर मंगल पांडे भड़क गया। "आप लोग डरपोक हैं। नामर्द हैं। ठीक है, मैं अब स्वयं अकेला दुश्मन से लड़ूंगा।" हाथ में बंदूक उठाकर मंगल पांडे मैदान में दौड़ने लगा। तभी सार्जेंट मेजर



ह्यूस्टन और लेफ्टिनेंट बॉ वहां पहुंच गये। उन्हें देखकर मंगल पांडे का खून खौल उठा। बॉ अपना घोड़ा मंगल पांडे के सामने करके आगे बढ़ा। ह्यूस्टन ने उसे रोका और कहा, "रुक जाइये। आप उस सिपाही के पास हरगिज मत जाइये। वह पागल हो गया है। वह आप पर किसी भी समय हमला कर सकता है।"

अंग्रेज अधिकारी चतुराई से आगे बढ़ रहा था। यह देखकर मंगल पांडे ने उस पर गोली चला दी। निशाना गलत लगने से वह गोली बॉ के घोड़े को जा लगी। ह्यूस्टन सावधान होकर मंगल पांडे पर निशाना साधते हुए खड़ा हुआ। लेकिन मन ही मन डर गया था। वह निशाना

नहीं लगा सका। पांडे ने कमर की तलवार खींचकर बॉ की गर्दन और कंधे पर वार कर दिया। उसके बाद ह्यूस्टन के माथे पर बंदूक के दस्ते से वार किया। अकेले मंगल पांडे ने दो अंग्रेज अधिकारियों का मुकाबला किया। तभी पांडे की ओर उसका साथी सिपाही शेख पालटु दौड़ा। पांडे अपने साथी को देखकर असावधान स्थिति में खड़ा रहा। पांडे की सहायता करने के बजाय शेख पालटु ने उसको पीछे से पकड़ लिया। मंगल पांडे शेख पालटु के सामने असहाय हो गया।

शेख पालटु बलवान और ऊंची कदकाठी का सिपाही था। मंगल पांडे के दोनों हाथ जकड़ लिये गये थे। वह कुछ नहीं कर पा रहा था। कुछ देर बाद पांडे ने पालटु का पाश ढीला किया। अब वह बॉ और ह्यूस्टन का पीछा करने लगा। शेख पालटु ने अपने सहकर्मी सिपाही को धोखा दिया था। यह देखकर सभी देसी सिपाही संतप्त हुए। वे अब पालटु पर पत्थर और जूते फेंकने लगे। पालटु यह देखकर डर गया। वह जान बचाकर मैदान से भाग निकला।

तब तक कर्नल व्हीलर वहां पहुंच गया। हमेशा की तरह गर्जना करके उसने आदेश दिया, "उस हरामजादे को पकड़कर मेरे सामने खड़ा कर दो।"

इस आदेश पर सभी सिपाही अपनी जगह चुपचाप खड़े रहे। अपने आदेश की अवहेलना देखकर व्हीलर ने मैदान छोड़ दिया। ब्रिगेडियर चार्ल्स ग्रांट ने भी यही आदेश दिया। लेकिन उसका आदेश भी नजरअंदाज कर दिया गया। हिअर्सी ने अब दूसरा रास्ता अपनाया। उसने पास खड़े जमादार ईश्वरी पांडे पर पिस्तौल का निशाना लगाया और हुक्म दिया, "मैं क्विक मार्च करूंगा, तब तुम उस सिपाही पर हमला करोगे। उसे पकड़कर मेरे सामने खड़ा करना होगा। अगर तुम यह काम नहीं करोगे, तो मैं तुम्हें गोली मार दूंगा।"

ईश्वरी पांडे असहाय था। वह मंगल पांडे की ओर बढ़ा। एक घंटे की हाथापाई और छीनाझपटी में मंगल पांडे थक गया। लड़ने की सारी शक्ति चुक रही थी। आखिर मंगल पांडे ने स्वयं पर गोली चला दी। वह शत्रु के हाथों पड़ना नहीं चाहता था। गोली उसके गर्दन में घुस गयी थी। वह बेहोश होकर जमीन पर गिर पड़ा। उसे तुरंत फौजी अस्पताल में दाखिल किया गया। सप्ताह भर बाद मंगल पांडे पर मुकदमा दायर किया गया। जज ने उससे बार-बार एक ही सवाल पूछा-

"किसके इशारे पर तुमने यह काम किया है ? इस साजिश के पीछे कितने और लोग हैं ?"

"मैंने अकेले यह सब कुछ किया है।"

"क्या तुम्हें अपनी सफाई में और कुछ कहना है ?"

"कुछ नहीं।"

8 अप्रैल 1857 को बैरकपुर के जेल में मंगल पांडे को फांसी पर लटका दिया गया। कंपनी सरकार ने मंगल पांडे की हत्या की, लेकिन उसकी यादें सदा के लिए अमर हो गयीं। अब देसी सिपाहियों में मंगल पांडे का नाम रौशन हो गया।

दावानल भड़का

बैरकपुर के समान अंबाला भी एक बड़ा लश्करी थाना था। दोनों शहरों के बीच एक हजार मील का फासला है। अंग्रेज सेनानी बेखबर रहे। उन्होंने सोचा, बैरकपुर का किस्सा अंबाला तक पहुंचने में काफी समय लगेगा। लेकिन हकीकत कुछ और थी।

अंबाला के सैंतीसवें पलटन के हर एक देसी सिपाही को मंगल पांडे का बलिदान मालूम हो गया था। सभी के मन में उमंग की लहर दौड़ रही थी। 'हमें भी मंगल पांडे जैसी बहादुरी दिखानी चाहिए!'

कंपनी का सेनानी जॉर्ज अन्सन गर्मी की लू से बचने के लिए शिमला की ठंडी हवा में आराम फरमा रहा था। एक दिन उसे अंबाला से कैप्टन मार्टिनी से पत्र प्राप्त हुआ। पत्र में लिखा था -

"यहां का माहौल नाजुक बनता जा रहा है। देसी सिपाहियों को हम किस तरह समझायें ? हमारा उद्देश्य उनका धर्म भ्रष्ट करना नहीं है। ये लोग बेसब्र होते जा रहे हैं। किसी मामूली घटना से भी स्थिति बेकाबू हो सकती है।"

पत्र पढ़कर सेनानी ने कहा, "देसी सिपाहियों के बीच कानाफूसी क्या हो गयी कि हमारे लोग बेवजह डर गये हैं!"

अंबाला छावनी के अंग्रेज अधिकारियों के घरों पर सिपाहियों ने हमला बोल दिया। उन्होंने कुछ बंगलों में आग लगा दी। सरकारी कचहरियों को भी आग लगा दी गयी। अंबाला के सिपाहियों की

बगावत खत्म करने के लिए शिमला से फौज बुलायी गयी। पूर्वी बैरक़पुर और पश्चिमी अंबाला के बीच मेरठ शहर बसा हुआ है। मेरठ की छावनी से दिल्ली पर नजर रखी जाती थी। इस महत्त्वपूर्ण छावनी में ग्यारहवीं तथा बीसवीं पलटन तैनात थी।

मेरठ छावनी में भी अब अन्य जगहों की तरह एनफिल्ड बंदूकों की आपूर्ति होने लगी थी। पहले अंग्रेज सिपाहियों को यह बंदूक चलाने का प्रशिक्षण दिया गया। इसके बाद देसी सिपाहियों को प्रशिक्षण देने की योजना तय हुई थी। यह प्रशिक्षण कार्यक्रम 24 अप्रैल से शुरू होने वाला था। इसके बिलकुल पहली रात को हिंदू सिपाहियों ने गंगा जल की तथा मुसलमान सिपाहियों ने कुरान की कसम खायी- "हम उसी बंदूक को हाथ लगायेंगे, जिस पर कोई चरबी नहीं लगायी गयी होगी।"

ब्रिगेडियर विल्सन तक यह खबर पहुंच गयी। वह हिंदुस्तान की सेना में पिछले चालीस सालों से नौकरी कर रहा था। वह अच्छी तरह जानता था कि देसी सिपाहियों को चोट पहुंचाना महंगा साबित होगा। उनको नयी बंदूकों का प्रशिक्षण देना आवश्यक था। इसलिए उसने निर्णय लिया, "हम देसी सिपाहियों को समझायेंगे। हम अभ्यास के लिए पुरानी कारतूस का ही प्रयोग करेंगे।"

लेकिन विल्सन का यह सुझाव बाकी अंग्रेज सेना अधिकारियों के गले नहीं उतर पाया। उनकी राय थी कि "हम अगर मेरठ के सिपाहियों को यह सहूलियत देंगे तो इसका बुरा असर अन्य जगहों पर पड़ेगा। सब यही मांग करने लगेंगे। सेना का अनुशासन खत्म हो जायेगा।"

और यह सच भी था। एक बार बड़े अफसरों का खौफ खत्म हो जाये, तो सारा मामला बिगड़ सकता है। इसलिए सभी ने फैसला

किया, "अब यह सहूलियत हरगिज नहीं देंगे।"[1] निर्णय लिया गया कि देसी सिपाहियों को भी बंदूकों के साथ चरबी लगायी कारतूसें ही दी जायेंगी।

मेरठ में नब्बे घुड़सवारों का एक दल था। उनकी कवायद का दिन था। उनमें से पांच अफसर और बाकी सभी सिपाही थे। सभी पचासी सिपाहियों ने चरबी लगी किसी वस्तु को हाथ न लगाने की कसम खायी थी। अंग्रेजी हुकूमत के गाल पर यह जोरदार तमाचा था। उन सभी सिपाहियों का कोर्ट मार्शल हुआ। उनमें से ग्यारह सिपाही हाल ही में भर्ती हुए थे। उनको पांच साल की तथा बाकी सिपाहियों को दस साल की कैद सुनायी गयी।

इस सजा की तामील देसी सिपाहियों के सामने की गयी। 9 मई को सुबह नौ बजे मेरठ छावनी के सभी सिपाहियों को मैदान पर बुलाया गया। इसकी वजह उन सबको नीचा दिखाना था। ये सिपाही संख्या में सत्रह सौ थे जिन्हें अपने साथियों की बेइज्जती पसंद नहीं आयी। इस सजा के तहत गुनहगार सिपाहियों की वर्दी उतार ली गयी थी। हथियार छीनकर पचासी सिपाहियों को नंगे पांव कर दिया गया। उनके शरीर पर लंगोट के सिवाय कुछ नहीं था।

नंगे पांव, बिना पगड़ी और हाथों में बेड़ी लटकाये हुए सिपाहियों का जुलूस निकाला गया। कवायद मैदान से लेकर जेल की तरफ जाता हुआ यह जुलूस सारे मेरठ शहर ने देखा। शहरवासियों के आंखों में खून उतर आया।

इस घटना के बाद दूसरे दिन 10 मई को रविवार था। छुट्टी का दिन। घर में बैठे अंग्रेज अधिकारी गर्मी से तंग आ चुके थे। शाम को गर्मी कम हुई। अंग्रेज नागरिक चर्च जाने की तैयारी कर रहे थे। तब तक देसी सिपाहियों ने जेल तोड़ दिया था। सजा पाये सभी पचासी

कैदी सिपाहियों को जेल से रिहा किया गया। मेरठ में और एक जेल थी जिसमें शहर के खतरनाक गुंडे बंद थे। इस जेल पर गांव वालों ने हमला बोल दिया। सभी गुंडों को रिहा कर दिया गया। उन्होंने रिहा होते ही गांव की दुकानों को लूटना शुरू किया।

देसी सिपाहियों ने अपना मोर्चा अंग्रेज कालोनी की ओर किया। यह खबर सुनकर ब्रिगेडियर विल्सन डर गया। उसने सोचा कि अंग्रेज सिपाही इस बगावत का सामना नहीं कर सकेंगे। दिल्ली की मदद मांगने वह तारघर दौड़ा। तारघर का संपर्क तोड़ दिया गया था। आगरा से संपर्क बनाने की कोशिश भी नाकामयाब रही। देसी सिपाहियों की पलटन अंग्रेजों पर हमला करने लगी। शाम होने तक करीब पचास अंग्रेजों को मौत के घाट उतार दिया गया था। इस कामयाबी से खुश होकर देसी सिपाहियों ने अपना मोर्चा दक्षिण की ओर किया। बादशाह की राजधानी अब सिर्फ चालीस मील दूर रह गयी थी। सभी सिपाहियों ने एक स्वर में कहा - "चलो दिल्ली!"

जब वे दिल्ली पहुंचे, वह दिन था - 11 मई 1857। बादशाह बहादुरशाह लाल किले के परकोटे पर आ गया। किले के बाहर शोरगुल बढ़ गया था। बूढ़े बादशाह का शरीर कांप रहा था। उसने किले के नीचे नजर की। वहां अनेक सिपाही लश्करी पोशाक में थे। कुछ सिपाहियों ने घरेलू पोशाक पहन रखी थी। बादशाह का दर्शन होते ही हवा में स्वर गूंजा-"शहंशाह-ए-हिंद जिंदाबाद!" बादशाह ने बायां हाथ माथे तक लाकर अभिवादन करके नारों को स्वीकार किया।

घुड़सवारों का सरदार आगे बढ़ा। उसने बादशाह का अभिवादन किया और कहा, "जहांपनाह! अपने धर्म की रक्षा के लिए हम लड़ाई लड़ना चाहते हैं। इस पवित्र कार्य में हमें आपका आशीर्वाद चाहिए।

आप हमारी सहायता कीजिये। लोग हमारे पीछे आयेंगे। जब तक हम फिरंगियों को देश के बाहर नहीं कर देंगे, तब तक हम सुख-चैन की नींद नहीं लेंगे। आप हम पर भरोसा रखिये।" देसी सिपाहियों का जोश देखकर बादशाह खुश हुआ। लेकिन उसे अपने थके शरीर पर भरोसा नहीं था। वह पशोपेश में पड़ गया। अब सिपाहियों को क्या जवाब दें ?

कंपनी सरकार ने बादशाह की रक्षा के लिए सैनिकों की एक टुकड़ी तैनात की थी। बादशाह ने टुकड़ी के कैप्टन डगलस को अंदर बुला लिया और आदेश दिया, "जाइये, किले के बाहर पधारे सिपाहियों की अगवानी कीजिये तथा उन्हें क्या चाहिए, पूछताछ करके पता लगाइये।"



कैप्टन डगलस बाहर जाकर सिपाहियों को धमकाने लगा, "आप यहां पल भर भी मत रुकिये। शहर के बाहर पुराने राजमहल में आप मेरा इंतजार करें।"

मेरठ से दौड़ लगाकर आये हुए सिपाहियों को कैप्टन डगलस का यह व्यवहार अच्छा नहीं लगा। उन्होंने राजघाट की ओर जानेवाली सड़क से दिल्ली में प्रवेश किया। मेरठ से आनेवाले सिपाहियों का झुंड दिल्ली शहर में दाखिल हो रहा था। दिल्ली की बिगड़ी हुई स्थिति देखकर ज्वाइंट मजिस्ट्रेट मेटकाफ मन ही मन डर गया। वह स्वयं को दिल्ली का बादशाह मानता था। बहादुरशाह अब सिर्फ नाम मात्र का बादशाह रह गया था।

मेरठ की घटना की खबर पिछले दिन ही मेटकाफ को मालूम हो गयी थी। वह किसी भी हालत में दिल्ली को बचाना चाहता था। वह सोच रहा था कि अब तुरंत कुछ कार्रवाई करनी चाहिए। वह तुरंत बग्घी में जाकर बैठ गया। विद्रोही सिपाहियों को कलकत्ता गेट के पास रोकना जरूरी था। वहां सैकड़ों अंग्रेज स्त्री-पुरुष डर के मारे चीख रहे थे। मेटकाफ को देखकर वे सभी गिड़गिड़ाये, "खुदा के लिए हमें बचाइये!" मेटकाफ ने कलकत्ता गेट बंद करके हथियारबंद सिपाहियों का पहरा लगा दिया। अंग्रेज अधिकारियों द्वारा लगाये गये प्रतिबंध के विरुद्ध विद्रोही सिपाहियों ने हथौड़ियों से कलकत्ता गेट तोड़ डाला। अब उनको कोई रोक नहीं सकता था।

दिल्ली के अंग्रेज कालोनी पर डर का साया मंडराने लगा। अंग्रेज परिवारों की रक्षा के लिए मेटकाफ ने कमिश्नर साइमन फ्रेजर से विचार-विमर्श किया। ज्वाइंट मजिस्ट्रेट की हैसियत से मेटकाफ ने पुलिस को आदेश दिया, "दिल्ली शहर में घुस आये इन चोर-बदमाशों की हड्डी-पसली एक कर दो। कंपनी सरकार के हुक्म की तौहीन

करने वालों को यही सबक ठीक रहेगा।"

सभी पुलिस भारतीय थे। किसी ने भी इस हुक्म की तामील नहीं की। वे अपनी जगह पर शांत खड़े रहे। मेटकाफ को विद्रोह का अंदाजा लग गया। बागी सिपाहियों ने मारकाट शुरू कर दी थी। इस खबर से घबराये हुए कोतवाली के सभी अंग्रेज अधिकारी कलकत्ता गेट पर इकट्ठा हुए। उन्होंने बागी सिपाहियों पर गोली बरसाना शुरू किया। यह देखकर दिल्लीवासी बिफर गये। वे हथियार लेकर देसी सिपाहियों की सहायता करने दौड़ पड़े। थोड़ी ही देर में यह दंगा कश्मीरी गेट तक पहुंच गया। जनता के इस विद्रोह पर काबू पाना मुश्किल था।

मेटकाफ अपनी कचहरी में गया। वहां उसे कलकत्ता गेट की वारदात में कैप्टन डगलस और साइमन फ्रेजर की हत्या की खबर मिली। लाल किले के सामने कलेक्टर जॉन रॉस को हजारों लोगों के सामने पत्थरों से मारा गया। 'दिल्ली गजट' समाचार पत्र कार्यालय को आग लगा दी गयी। लंदन बैंक के स्थानीय मैनेजर जख्मी हुए। उसकी पत्नी ने चिढ़कर बरछी लेकर भीड़ पर हमला किया। उसे भीड़ ने कुचलकर मार डाला।

अनुभवी मेटकाफ ने अब धीरज खो दिया था। बागी सिपाहियों को देखकर आम जनता में भी विद्रोह फैल गया। अंग्रेज कालोनी पर हमले बढ़ने लगे। अंग्रेजों के घरों को आग लगा दी गयी।

विद्रोही भीड़ ने पचास अंग्रेजों को पकड़कर एक मकान में बंद कर दिया। दम घुटने के कारण बंद मकान में कैद सभी अंग्रेज चिल्लाने लगे। बच्चे रोने लगे। शाम होने पर कार्यालय से अंग्रेज बाबू, अधिकारीगण जब घर लौटे तो औरतों और बच्चों को नदारद देखकर उनके होश उड़ गये। अंग्रेज अधिकारियों ने यमुना पुल पर

बंदोबस्त बढ़ा दिया। किंतु देसी सिपाहियों ने वहां के थाने को ध्वस्त कर दिया। बागी सिपाहियों का झुंड उमड़ रहा था।

दिल्ली में अंग्रेज सिपाहियों की तीन पलटनें तैनात की गयी थीं। इनके नंबर थे -अड़तीस, चौवन और चौहत्तर। चौवनवें पलटन का लेफ्टिनेंट एडवर्ड व्हीबर्ट नाश्ता कर रहा था। तभी हवलदार ने संदेश दिया, "सर, मेरठ के बागी सिपाहियों ने शहर पर कब्जा करने के लिए दंगा शुरू कर दिया है। उपद्रवग्रस्त इलाकों में शांति स्थापित करने का आदेश हमारी पलटन को मिला है।"

यह सुनकर व्हीबर्ट तुरंत उठ खड़ा हुआ। उसने वर्दी पहन ली और घोड़े पर सवार होकर कवायद मैदान की ओर कूच कर गया। उसके पीछे पलटन के सभी सिपाही वहां पहुंच गये। कर्नल रिप्ली सिपाहियों को आदेश दे रहा था। व्हीबर्ट के गुट का नेतृत्व मेजर पैटरसन कर रहा था। रिप्ली ने पैटरसन से कहा, "आप दो तोपें लेकर शहर जाइये। यह काम तुरंत करें। इन तोपों के गोला-बारूद के सामने बागी सिपाहियों का विद्रोह खत्म हो जायेगा। बाकी लोगों के साथ मैं कश्मीरी गेट जा रहा हूं।"

यमुना नदी का पुल ढ़ह गया था। उसे पुनः लगाना जरूरी था। यह काम टायटलर और गार्डनर को सौंपा गया। दोनों अपनी फौज लेकर वहां दाखिल हुए। फौज के देसी सिपाहियों को गोला-बारूद देते समय आवश्यक खबरदारी के आदेश सुपरवाइजर को दिये गये थे।

सरकार को देसी सिपाहियों पर विश्वास नहीं रह गया था। उनकी तरफ शक की निगाहों से देखा जा रहा था। यह बात देसी सिपाहियों को नागवार गुजरी। इस अपमान के कारण वे अब जिद पर उतर आये। आयुध गोदाम से जितने कारतूस मिले, उतने लेकर वे अपनी जेबों में भरने लगे। फिर वे पुल की ओर मार्च करने लगे। सबके मन

में आजादी की उमंग लहरा रही थी। वे सभी नये-नये नारे लगाते हुए आगे बढ़ रहे थे। सभी सिपाही खुश नजर आ रहे थे। यह देखकर टायटलर और गार्डनर निश्चिंत हो गये। अब यह टुकड़ी पुल के पास गश्त लगा रही थी।

कुछ सिपाही गुट बनाकर एक जगह बैठे थे। पुल के नजदीक एक पुराना मकान था। मकान में कोई नहीं था। इसलिए टायटलर ने सिपाहियों को आदेश दिया, "आप लोग धूप में क्यों बैठे हैं ? जाइये, उस मकान में जाकर बैठ जाइये।"

"नहीं, हम यहीं ठीक हैं।"

टायटलर और गार्डनर आपस में बातचीत कर रहे थे। सिपाही की वर्दी पहना हुआ कोई अजनबी मकान में चोरी-छिपे घुस गया। उसके पीछे सभी देसी सिपाही मकान के भीतर चल पड़े। काफी देर तक सिपाही मकान से बाहर नहीं आया तो टायटलर को शक हुआ। मकान के अंदर छिपे अजनबी सिपाही को देखने टायटलर वहां पहुंचा। उसने देखा, वह सिपाही बाकी सिपाहियों के साथ बातचीत कर रहा था। टायटलर को देखते ही सभी सिपाही पिछले दरवाजे से शहर की ओर भाग गये। अब यह बात साफ हो गयी कि टायटलर और गार्डनर के सिपाहियों की बागी सिपाहियों के साथ मिलीभगत हो गयी थी। उनके टुकड़ियों के सिपाही कश्मीरी गेट की ओर बढ़ रहे थे। वे नारे लगा रहे थे-"पृथ्वीराज की जय!"

पृथ्वीराज यानी बहादुरशाह- दिल्ली का बादशाह, हिंदुस्तान का बादशाह।

बागी सिपाहियों को कश्मीरी गेट पर रोकना अंग्रेज सेनानियों को मुश्किल हो गया। अंग्रेज स्त्री-पुरुषों का धीरज खत्म हो रहा था। अब दिल्ली में रुकना मौत को बुलावा देने जैसी बात थी। शाम होने तक

सभी अंग्रेज कालोनी सुनसान हो गयी। कर्नल व्हीलर को देखकर उनके जान में जान आयी।

वह 11 मई 1857 का दिन था। सूरज डूब रहा था। दिल्ली शहर पर बागी सिपाहियों ने अपना निशान लगा दिया था। उन्होंने सौ साल पहले प्लासी में हुए पराजय का बदला चुकाया था। यह एक विशेष अभियान था।

बिठूर के महाराज

दिल्ली में अंग्रेजों की हुई कत्ल की चर्चा दिल्ली के आसपास के छोटे कसबों, गांवों में फैल गयी। सभी जगह विद्रोह की लहर दौड़ गई। सभी गांवों में अंग्रेजों के सरकारी कचहरियों पर लोग हमले करने लगे। इंकलाब के नारे बुलंद हो रहे थे। बंगाल के पश्चिमी क्षेत्र से लेकर पंजाब के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र तक की चिंता सरकार को सताने लगी। ईस्ट इंडिया कंपनी के कलकत्ता स्थित मुख्यालय में सन्नाटा छा गया।

दिन-ब-दिन लोगों में विद्रोह की भावना बढ़ रही थी। अलीगढ़, शाहजहांपुर, बरेली, फरीदाबाद, आजमगढ़, मुरादाबाद आदि सभी शहरों में विद्रोह की हवा फैल गयी थी। राजपुताना नजदीक था। नसीराबाद और नीमच भी विद्रोह की चपेट में आ गये थे। सिपाही अंग्रेजों के आदेशों का पालन नहीं कर रहे थे। जून, जुलाई, अगस्त के नब्बे दिनों में बागी सिपाहियों को अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। लेकिन बागी सिपाही किसी प्रभावी नेता की तलाश कर रहे थे। इस मुहिम की बागडोर सौंपने के लिए लायक नेता की तलाश शुरू हो गयी।

बिठूर के महाराज श्रीमंत धोंडोपंत उर्फ नाना साहब पेशवा कानपुर में पधारे थे। उनके मन में अंग्रेजों के खिलाफ विद्रोह की भावना पनप रही थी। बागी सिपाहियों के नेता नाना साहब से जाकर

मिले। वे उनसे प्रार्थना करने लगे, "श्रीमंत! हमने अंग्रेजों के खिलाफ बगावत की है। हमें आपका आशीर्वाद चाहिए। आदरणीय महाराज के सहयोग से हम अवश्य विजयी हो जायेंगे। हम आपका राजपद फिर से बहाल करेंगे। आप बिठूर के महाराज बन पायेंगे।"

यह सुनकर नाना साहब चकित हुए। उन्होंने कभी इस बगावत की ओर गंभीरता से देखा नहीं था। वह चाहते थे कि उनका खोया हुआ राजपद स्वयं की बहादुरी से प्राप्त हो। वे कंपनी सरकार की मेहरबानी पर निर्भर नहीं रहना चाहते थे। उन्होंने बागी सिपाहियों के प्रस्ताव को तुरंत मान लिया।

"हां, मैं आपके साथ हूं।"

इस विषय पर विस्तार से बातचीत हुई। अब समय बहुत कम बचा था।

सभी ने दिल्ली की ओर कूच करने का निर्णय लिया। दूसरे दिन सुबह नाना साहब अपने सिपाहियों को लेकर पश्चिम दिशा की ओर चल पड़े। उनका पहला मुकाम कल्याणपुर में हुआ। नाना साहब के करीबी दोस्त अजीमुल्ला ने कहा, "श्रीमंत, आज्ञा हो तो मन की बात कहना चाहता हूं।"

"हां, जरूर कहिये।"

"आप दिल्ली न जायें तो बेहतर होगा।"

"क्यों?"

"वहां जाकर हम क्या करेंगे? सोचिये, अगर हमने दिल्ली पर कब्जा कर लिया, तो भी दिल्ली के तख्त पर बहादुरशाह को ही बिठाया जायेगा। वह आपको दीवान बनायेगा। इससे आपको क्या लाभ होगा?"

"आप कहना क्या चाहते हैं?"

"मैं चाहता हूं कि हम कानपुर लौट चलें। हमारे पास चार टुकड़ियों की फौज है। कानपुर की जनता आपको राजा मानती है। वे आपका साथ देंगी। हम फिरंगियों को देश से निकाल देंगे। दिल्ली का दीवान होने के बदले बिठूर का राजा होने में ज्यादा फायदा है।"

अपनी राय बदलकर नाना साहब कानपुर की ओर अपनी सेना लेकर लौट पड़े। यह खबर सुनते ही मेजर जनरल व्हीलर कांप गया। नाना साहब की चार टुकड़ियों का सामना करना उसने नामुमकिन समझा। नाना साहब की पलटन ने कानपुर के बाहर अपना पड़ाव लगा दिया था। उनके पास तीन हजार दो सौ सिपाही और तीन सौ अंगरक्षकों की हथियारबंद फौज उपलब्ध थी। इसके विपरीत, व्हीलर के पास दो सौ अंग्रेज सिपाहियों की मामूली फौज थी। इसके अलावा चार सौ औरतें और बच्चे तथा पांच सौ पुरुष अंग्रेज भी मौजूद थे। इन दो सौ अंग्रेज सिपाहियों में से सौ से अधिक सिपाही दंगे में जख्मी हुए थे। सिपाहियों की सख्त कमी महसूस की जा रही थी। बैरक में मौजूद बंदूकों की बड़ी संख्या को देखकर व्हीलर निश्चिंत हो गया।

दूसरे दिन सुबह नाना साहब का तोपखाना बैरक की दिशा में गोले बरसा रहा था। डंकन होटल में नाना साहब ने डेरा जमाया हुआ था। वे वहां से इस हमले का संचालन कर रहे थे। नाना साहब के लिए यह लड़ाई निर्णायक थी। जीवन-मरण का सवाल था। कंपनी सरकार की ओर से कानपुर में रसद पहुंचने से पहले व्हीलर को पराजित करना आवश्यक था।

11 जून को नाना साहब के सिपाहियों ने पहला हमला बोला। व्हीलर का तोपखाना गोले बरसा रहा था। नाना साहब के सिपाही कानपुर में प्रवेश नहीं कर पाये। कानपुर की घेराबंदी से कुछ फायदा नहीं हो रहा था। नाना साहब ने अपना एक नौकर अंग्रेज छावनी में

भेजा। नौकर ने बढ़ई का पहनावा पहनकर कानपुर में प्रवेश किया। किसी को शक नहीं हुआ। अंदर की स्थिति का जायजा लेकर वह नाना साहब के पास लौट आया।

"श्रीमंत, छावनी में अनाज का संकट आ पड़ा है। दिन-रात घेराबंदी के कारण लोग परेशान हो गये हैं। बीमारी बढ़ने से मृतकों की संख्या बढ़ रही है। सभी परेशान हैं।"

यह खबर सुनकर नाना साहब ने करीबी दोस्त अजीमुल्ला के साथ विचार-विमर्श किया। अजीमुल्ला ने सुझाव दिया, "हम घोषणा करेंगे कि जो अंग्रेज हथियार नीचे रख देगा, उसे इलाहाबाद भेज दिया जायेगा। फिर कानपुर हमारे हाथ आ जायेगा।"

यह योजना नाना साहब को पसंद आयी। उन्होंने इस संबंध में व्हीलर को एक पत्र भेज दिया। व्हीलर यह पत्र पढ़कर बिगड़ गया।

"मैं और मेरे साथी यह शर्त कभी नहीं मानेंगे। हमें अब प्राणों की चिंता नहीं है।"

बाकी अधिकारियों ने व्हीलर की बात मान ली। लेकिन मूर अकेला खामोश था। सबकी सुनने के बाद उसने व्हीलर को समझाया, "बारिश का मौसम शुरू हो गया है। इस हाल में शत्रु ने बाहर घेराबंदी की हुई है। हम उनके सामने ज्यादा दिन टिक नहीं पायेंगे। एक बार सुरक्षा दीवार ढह जायेगी तो खंदक में पानी जम जायेगा। हमारा हथियार का गोदाम भीग सकता है। बारिश खत्म होने तक हमारे पास पर्याप्त अनाज भी उपलब्ध नहीं है।"

मूर की बात व्हीलर टाल नहीं सका। दूसरे दिन मूर ने अजीमुल्ला से भेंट की। मूर ने शर्त रखी, "हम यह छावनी आपके हवाले कर देंगे। लेकिन छावनी छोड़ते समय हमारे पास बंदूकें रहेंगी। बीच राह में आत्मरक्षा के लिए बंदूकें जरूरी हैं। हमारे जख्मी सिपाही, औरतें,

बच्चों के लिए बैलगाड़ियों का इंतजाम किया जाय। इसके अलावा, हमें पर्याप्त अनाज दीजिए ताकि हम इलाहाबाद तक आसानी से पहुंच सकें।''

नाना साहब ने ये शर्तें मान लीं। व्हीलर ने अपने कुछ अधिकारियों को गंगा किनारे का जायजा लेने के लिए भेज दिया। सतीचौरा घाट पर नौकाएं तैयार रखी गयी थीं। कानपुर से इलाहाबाद की यात्रा सरल को जायेगी, यह सोचकर छावनी खाली हो गयी। कानपुर के अंग्रेज नौका पर सवार हुए।

सभी लोग कानपुर जल्द से जल्द छोड़ना चाहते थे। लेकिन अचानक नदी के ऊपरी हिस्से से तोपखाने से गोले बरसने शुरू हो गये। बागी सिपाहियों ने नौकाओं पर हमला बोल दिया था। नाविक पानी में कूद पड़े। अब इस हाल में अंग्रेज पल भर भी रुकना नहीं चाहते थे। उन्होंने नौकाएं पानी में धकेल दीं। बंदूकों से गोलीबारी हो रही थी। औरतें, बच्चे चीख रहे थे। अंग्रेज औरतों ने बच्चों को लेकर अपने आपको पानी में धकेल दिया। कुछ औरतें पानी में बह गयीं। अब उन्हें कोई आसरा नहीं मिल रहा था। बागी सिपाही घाट की ओर दौड़ पड़े। किनारे पर पहुंचे अंग्रेजों को घेर लिया गया। सिपाहियों ने व्हीलर के गर्दन पर घाव करके उसे मार डाला। नौकाओं में चढ़ाया गया सामान लूट लिया गया। घुड़सवारों ने कत्लेआम शुरू कर दिया।

गंगा का पानी खून से लाल हो गया था। बहुत-से अंग्रेज स्त्री-पुरुष मारे गये। अनेक अंग्रेज घायल हुए। कुछ अंग्रेज जान बचाकर सूरजपुर पहुंचे। बागी सिपाहियों ने उनका पीछा किया। वे लोग जंगल में घुस गये। उनमें सिर्फ चार अंग्रेज पैदल इलाहाबाद पहुंच पाये। बाकी अंग्रेजों ने रास्ते में ही दम तोड़ दिया। सतीचौरा घाट के कत्ल में सौ अंग्रेज औरतें बच पायीं। नाना साहब के हुक्म

से उनको 'सावदा हाउस' भवन में शरण मिली। नाना साहब का सख्त आदेश था कि इन औरतों की इज्जत की रक्षा की जाये। सावदा हाउस बहुत छोटा था। तब इस भवन के पास 'बीबी घर' में सबको भेजा गया।

फतेहगढ़ से भागी हुई अंग्रेज औरतों को बागी सिपाहियों ने नवाबगंज में पकड़ लिया था। इन औरतों को भी बीबी घर में आश्रय मिला। बीबी घर में ये औरतें चटाई पर सोती थीं। उन्हें दाल-चपाती और बच्चों को दूध दिया जाता था। 27 जून को सतीचौरा घाट हत्याकांड हुआ था। दो दिनों के बाद नाना साहब बिठूर के लिए निकल पड़े। वहां जाकर वे अपने पिताजी की गद्दी समारोहपूर्वक ग्रहण करनेवाले थे। बिठूर में राजतिलक समारोह आयोजित किया गया था। कानपुर में दीवाली मनायी जा रही थी। 1857 के जून महीने में नाना साहब के पराक्रमों का बोलबाला था। जून के अंतिम दिन



उनके माथे पर राजमुकुट पहनाया गया। उनकी मनोकामना पूरी हुई। इसके बावजूद उनके मन में अशांति छायी रही।

बीबी घर में महामारी फैलने से पच्चीस औरतों की मृत्यु हो गयी। नाना साहब ने उनके इलाज के लिए डाक्टर को नियुक्त किया। अब मृत्यु का तांडव थम गया था। उनके मन से एक बोझ कम हो गया।

सतीचौरा की घटना कोई भूल नहीं पाया। नाना साहब समझ नहीं पा रहे थे कि बागी सिपाहियों ने किसके बहकावे में आकर निरपराध अंग्रेजों का कत्ल किया है। कंपनी सरकार की प्रतिक्रिया जानने के लिए उन्होंने कुछ लोगों को इलाहाबाद भेजा। आधे रास्ते से लौटकर जासूसों ने जो खबर दी, उसे सुनकर नाना साहब के हाथों का राजदंड थरथराया। ब्रिगेडियर जनरल हेनरी हैवलॉक इलाहाबाद से निकल पड़ा था। उसके साथ एक हजार सिपाहियों की फौज थी। वह दिन था- 7 जुलाई। उसने नेपोलियन के शब्दों में सिपाहियों का वीरतापूर्वक आह्वान किया- "हम अब एक बड़ी लड़ाई लड़ने जा रहे हैं। कानपुर पर कब्जा करने पर ही हम चैन की सांस लेंगे। हमें अपने अंग्रेज भाई-बहनों की हत्या का बदला लेना है।"

बारिश के दिन शुरू होने वाले थे। वातावरण में गर्मी बढ़ गयी थी। इस भीषण गर्मी में सिपाही मुहिम पर निकल पड़े थे। अंग्रेज सिपाही ऐसी गर्मी से बेहद परेशान हो रहे थे। हैवलॉक के सिपाहियों में वह जोश नहीं था जो लड़ाई पर निकले सिपाहियों के पास होना चाहिए। हैवलॉक इस बात को भली-भांति समझ गया था। लेकिन वह धीरज रखकर कह रहा था, "हमारे कानपुर पहुंचते ही स्थिति नियंत्रण में आ जायेगी। शत्रु को सामने देखकर हमारे सिपाहियों में जोश पैदा हो जायेगा।"

चार दिनों में चालीस दिनों का फासला तय हो चुका था। सिपाही

अलसा गये थे। उनकी गति धीमी पड़ गयी थी। वे अब आपस में चर्चा करने लगे, "दुश्मनों ने कानपुर के आसपास बंदोबस्त पक्का किया होगा। हम कानपुर पर कब्जा नहीं कर सकेंगे।" कंपनी सरकार की हर निशानी मिटाने का काम बागी सिपाहियों ने किया था। रास्ते में हर सरकारी कचहरियों को आग लगा दी गयी थी। सभी जगहों पर अधजले सरकारी भवन और उससे निकलता धुआं नजर आ रहा था। रास्ते के मील के पत्थर उखाड़कर खेतों में फेंक दिये गये थे। सिपाहियों को कानपुर की दूरी का अंदाजा नहीं लग रहा था।

मेजर रेनॉ के नेतृत्व में निकले अंग्रेज सिपाहियों ने निर्मम अत्याचार ढ़ाने शुरू किये। गांव के हर पेड़ पर देसी आदमी की लाश लटक रही थी। सतीचौरा हत्याकांड की घटना से रेनॉ भड़क गया था। उसने कसम खायी थी कि "मैं एक भी देसी आदमी को जिंदा नहीं रहने दूंगा।"

एक बार सशस्त्र लड़ाई शुरू हो जाये तो दोनों तरफ की शक्ति सीमाओं का अंदाजा लग जाता है। जीतनेवाला हमेशा नसीबवाला माना जाता है। रेनॉ यह मानता था कि बेगुनाह अंग्रेजों की हत्या करके नाना साहब के हाथ खून से रंग गये थे। लेकिन रेनॉ के हाथ भी बेगुनाह देसी आदमियों के खून से रंग गये थे।

हैवलॉक ने कानपुर के मार्ग पर फतेहपुर आसानी से जीत लिया। उसने अपनी पत्नी से कहा, "मैं ईश्वर से प्रार्थना करता रहा था कि मुझे कंपनी सरकार अपनी फौज का लीडर बना दे। हमारी कामना थी कि हम हमेशा विजयी होते रहें। मेरी प्रार्थना ईश्वर ने सुन ली। उसकी परम कृपा से मैं शत्रु को पराजित कर सका। हमें चार घंटों के भीतर ग्यारह तोपें हासिल हुईं। यहां के सभी बागी सिपाही भाग गये। मैं ईश्वर का आभारी हूं। अब हमें कानपुर हासिल करना है।"

नाना साहब ने जान लिया कि अब हैवलॉक जल्द ही फौज सहित कानपुर पहुंच जायेगा। एक बार कानपुर उनके हाथ लग जाये तो वे बिठूर पर अपना झंडा फहरायेंगे। कानपुर की दक्षिण दिशा में मोरचा खोलने का निर्णय नाना साहब और उनके साथियों ने लिया।

बीबी घर में कैद अंग्रेज औरतों की समस्या नाना साहब को सताने लगी। अगर इन औरतों को रिहा कर दें तो वे हैवलॉक को सारी बातें बता देंगी। उन पर गुजरे अत्याचारों की कहानी जगजाहिर हो जायेगी। अब एक ही उपाय बचा था। इन औरतों की हत्या की जाये। किसी ने यह उपाय दरबार में सुझाया और सभी ने इस पर सहमति व्यक्त की। यह खबर नाना साहब के महल तक पहुंच गयी। यह सुनकर पेशवा परिवार की औरतें सिहर गयीं। उन्हें यह राक्षसी योजना पसंद नहीं आयी। ऐसे समय में चुप रहना अपराध होता है। अतः वे नाना साहब के साथ वाद-विवाद करने लगीं, "क्या आप यह घोर पाप करने जा रहे हैं ? अंग्रेज औरतें बेकसूर हैं। भगवान के लिए आप उन औरतों की हत्या मत कीजिये।"

नाना साहब पशोपेश में पड़ गये। अब किसकी सुनें—दरबार की या घर की औरतों की ? नाना साहब चुप रहे। यह देखकर घर की औरतें कहने लगीं-

"बीबी घर के अंग्रेज औरतों की जान को खतरा पहुंचा तो हम घर के ऊपर से कूदकर जान दे देंगी। आप हमें उनकी जान का भरोसा दें, अन्यथा हम अन्न-जल त्याग देंगी।"

इस धमकी का कोई असर नहीं हुआ। बीबी घर के अंग्रेज औरतों की हत्या करने का आदेश दे दिया गया। गांव के पांच कसाइयों ने इन औरतों के शरीर के टुकड़े करना शुरू किया। तब तक हैवलॉक कानपुर की हद तक पहुंच गया था। उसके साथ दूसरा अंग्रेज

अधिकारी नील भी आ मिला। नील संताप के मारे पागल हुआ जा रहा था। उसके सिपाही देसी आदमियों का कत्ल कर रहे थे। खून का बदला खून से लिया जा रहा था। जुलाई माह में कितनी जानें चली गयीं, कोई इसका अंदाजा नहीं लगा सका। कानपुर शहर में सब खून की होली खेल रहे थे। लखनऊ को बागियों ने घेर लिया था। वहां की रेजिडेंसी घबरा गयी।

अवध की स्थिति

दिल्ली के बाद अवध की राजधानी लखनऊ को विशेष महत्व दिया जाता था। वहां के नवाबों की शानोशौकत के किस्से मशहूर हो गये थे। कंपनी सरकार ने अवध की रियासत को अपने कब्जे में कर लिया था। नवाब का हाल देखकर प्रजा नाराज थी। प्रजा के मन में सरकार के प्रति असंतोष बढ़ रहा था। लेकिन वे कुछ कर नहीं पा रहे थे। मेरठ, दिल्ली, कानपुर और फतेहपुर के विद्रोह की खबरें सुनकर लखनऊ के लोगों में उत्तेजना बढ़ गयी थी।

कंपनी सरकार की फौज में नौजवानों की तादाद काफी अधिक थी। इन नौजवानों को गांव में सम्मान की दृष्टि से देखा जाता था। अवध की गद्दी बरखास्त की गयी थी। इसके बाद देसी सिपाहियों की शान कम हुई थी। अवध की प्रजा होने का उन्हें गर्व था। अंग्रेजों के आने के बाद उनकी महिमा घट गयी थी। उनके मन में विद्रोह की भावना भड़क उठी थी। विलियम स्लीमैन ने देसी सिपाहियों की भावना जान ली थी। उसने गवर्नर जनरल डलहौजी को लिखा था- ''अगर अवध की जनता को कोई कष्ट पहुंचा, तो बंगाल आर्मी विद्रोह करेगी। कृपया इस बात को ध्यान में रखिये।''

डलहौजी घमंडी किस्म का आदमी था। वह किसी की राय लेना पसंद नहीं करता था। वह पूरे हिंदुस्तान को अपने कब्जे में करना चाहता था। हर एक रियासत को वह खत्म करते जा रहा था। उसे

किसी की फिक्र नहीं थी। मगर स्लीमैन के इशारे को नजरअंदाज करके उसने बड़ी भूल की थी। अगर अंग्रेज समझदारी से काम लेते, तो अवध की जनता विद्रोह नहीं करती।

अवध में पहले सर जेम्स आउट्रम रेजिडेंट था। बीमार पड़ने पर वह इंग्लैंड गया था। उसके स्थान पर कोवली जैक्सन को अस्थायी रूप से भेजा गया था। जैक्सन मगरूर और तेज मिजाज किस्म का आदमी था। लखनऊ के प्रसिद्ध सरदारों, जागीरदारों का अपमान करना उसे अच्छा लगता था। लखनऊ आते ही उसने नवाब की हवेली पर कब्जा कर लिया और उसके पूरे खानदान को हवेली से हटा दिया। नवाब पर रैयत नाराज थी, लेकिन नवाब ही उनके अन्नदाता थे। नवाब की हालत देखकर रैयत में असंतोष फैल गया था।

वित्त आयुक्त मार्टिन गबिंस भी घमंडी और गर्म मिजाज किस्म का आदमी था। न्यायिक आयुक्त सनकी और चिड़चिड़ा था। इन तीनों अधिकारियों ने अवध के लोगों का जीना हराम कर दिया था। यह बात हेनरी लॉरेंस ने अवध आते ही भांप ली थी।

20 मार्च 1857 को लॉरेंस तबादला होकर लखनऊ आया था। इससे पहले वह लाहौर में था। लाहौर और लखनऊ की आबोहवा में काफी अंतर था। लखनऊ की अपेक्षा लाहौर काफी शांत इलाका था। उसने सोचा, आम जनता की खबर लेकर उनकी परेशानी दूर करनी चाहिए, तभी अवध की जनता कंपनी सरकार को सहयोग देगी। अवध रियासत खत्म होते ही लखनऊ रेजिडेंसी में आम जनता के प्रवेश पर रोक लगा दी गयी थी। लॉरेंस ने यह रोक हटा दी। वहां के व्यापारी और सरदारों की बैठक हर हफ्ते आयोजित होने लगी। लॉरेंस चीफ कमिश्नर के साथ ब्रिगेडियर जनरल भी था। लखनऊ की फौज में अफरातफरी मच गयी थी। घुड़सवार एक जगह तो थल सेना

किसी दूसरी जगह तैनात की गयी थी। तोपखाने की विपरीत दिशा में हथियार-गोदाम रखा गया था। अवध की राजधानी की रक्षा के लिए अंग्रेज सिपाहियों की सिर्फ एक टुकड़ी तैनात की गयी थी। बैरक से उनकी रेजिडेंसी डेढ़ मील की दूरी पर थी। रेजिडेंसी और बैरक के बीच देसी सिपाही रहते थे। देसी सिपाहियों में विद्रोह की भावना उबल रही थी। इस विद्रोह का विस्फोट कभी भी हो सकता था।

अप्रैल के शुरू में यह विद्रोह सामने आ गया। डाक्टर वॉल्टर वेल्स हमेशा की तरह फौजी अस्पताल में चक्कर लगाने निकले थे। उनके पेट में अचानक दर्द शुरू हुआ। उन्होंने दवा की शीशी मुंह में लगा दी। दवा जूठी हो गयी। एक देसी सिपाही ने यह सब कुछ देख लिया। वह कर्नल पामर के पास चिल्लाते हुए पहुंचा। पामर ने डा. वेल्स को खूब डांटा और शीशी तोड़ दी। इसके बावजूद सिपाहियों का गुस्सा शांत नहीं हुआ। उनके मन में शक की भावना बढ़ती गयी। इसी दौरान एक सिपाही ने डा. वेल्स के बंगले में आग लगा दी। वेल्स और उसकी पत्नी जान बचाकर पड़ोस के घर भाग निकले। घर की सारी चीजें लूट ली गयीं। पूरा बंगला जलकर ढेर हो गया। उसकी खबर लोगों को दूसरे दिन मिली। देसी सिपाहियों ने अपने अफसरों से कहा-

"आज के बाद हम कारतूस दांतों से नहीं तोड़ेंगे।"

"क्यों नहीं ? तुम्हें दांतों से ही तोड़ना होगा।"

"हम चुप नहीं बैठेंगे। अपना धर्म भ्रष्ट नहीं होने देंगे। धर्म भ्रष्ट करने वालों को मौत के घाट उतार देंगे।"

लॉरेंस इस धमकी से गुस्सा हो गया। लखनऊ के अंग्रेज सिपाहियों को लेकर लॉरेंस देसी सिपाहियों की कालोनी पर हमला करने निकला। उसने दहशत फैलाने के लिए दो तोपें भी साथ ले रखी

थीं। तोप की बारूद में जलती मशाल लगते देखकर कुछ देसी सिपाही भाग निकले। कुछ सिपाहियों ने अपने हथियार अफसरों को समर्पित कर दिये। फरार हुए कुछ सिपाही दो दिनों के बाद लौटे।

बिगड़ी हुई स्थिति को देखकर गबिंस ने सुझाव दिया, ''हम रेजिडेंसी की सुरक्षा के लिए सिपाहियों का पहरा लगा देंगे।''

इस पर लॉरेंस ने कहा, ''मैं इस बात से सहमत नहीं हूं। इससे देसी सिपाहियों को गलत संदेश मिल जायेगा। वे सोचेंगे कि हम डर गये हैं।''

बाकी अधिकारियों ने गबिंस की बात उचित ठहरायी। लॉरेंस को भी यह बात माननी पड़ी। बयालीसवें पलटन के अंग्रेज सिपाही रेजिडेंसी में आकर रहने लगे। इससे अंग्रेज अधिकारी बेफिक्र हो गये।

लखनऊ के गली-मुहल्ले में पोस्टर चिपकाये गये थे, जिन पर लिखा था-''फिरंगियों को यहां से भगा दो!''

देसी सिपाहियों की बस्ती में जाकर बागी सिपाही आह्वान कर रहे थे-''हिंदुस्तान पर कब्जा करनेवाले अंग्रेजों को कुचल देना चाहिए!''

इस तरह की खबरें रेजिडेंसी में पहुंच रही थी। अंग्रेज अधिकारियों में विचार-विमर्श होने लगा।

गबिंस ने कहा, ''फिलहाल हमको देसी सिपाहियों से हथियार वापस लेने चाहिए। वे हमारा कोई नुकसान नहीं कर सकेंगे।''

लॉरेंस ने गबिंस पर नाराज होकर कहा, ''मुझे सिर्फ लखनऊ नहीं बल्कि पूरे अवध की चिंता है। मैं सिर्फ लखनऊ नहीं बल्कि पूरे अवध प्रांत का चीफ कमिश्नर हूं।''

गबिंस के विचारों पर लॉरेंस को आश्चर्य हो रहा था। किसी

सिपाही से हथियार वापस लेने का मतलब उसका अपमान करना होता है। इसलिए लॉरेंस ने गबिंस को समझाया, "अगर हम देसी सिपाहियों से हथियार वापस लेते हैं तो यह खबर अवध में फैल जायेगी। पूरा अवध इलाका हमसे नाराज हो जायेगा।"

गबिंस इस बात पर सहमत नहीं हुआ। आखिर बिगड़कर लॉरेंस ने कहा, "लश्करी दांवपेंच की बातों में हमें प्रशासनिक अधिकारी की दखलअंदाजी बिलकुल पसंद नहीं है।" लॉरेंस को स्वयं पर पूरा भरोसा था।

एक दिन डरा हुआ विल्सन लॉरेंस से कहने लगा, "मैंने अभी एक देसी सिपाही की बात सुनी है। वह कह रहा था कि आनेवाले शनिवार यानी 30 मई को रात ठीक 9 बजे तोप की आवाज होगी। देसी सिपाही इस इशारे पर विद्रोह करेंगे।"

लॉरेंस को इस खबर पर विश्वास नहीं हुआ। उसने हंसकर कहा, "आजकल सभी जगहों पर अफवाहों की फसल बढ़ रही है।"

30 मई को रात ठीक 9 बजे तोप की आवाज हुई। लॉरेंस अपने बंगले के आंगन में टहल रहा था। वहां उसे दस-पंद्रह मिनटों तक कोई हलचल नजर नहीं आयी। उसने बंगले के भीतर प्रवेश किया। उसके हाथ में शराब का जाम था। वह विल्सन से बोला, "विल्सन, आपकी 'दोस्त कंपनी' वक्त की पाबंद नहीं है।" यहां उसने देसी सिपाहियों के संदर्भ में 'दोस्त कंपनी' शब्द का प्रयोग किया था। लॉरेंस बेफिक्र होकर शराब पी रहा था। कुछ ही मिनटों में लॉरेंस को चिल्लाने की आवाज सुनायी पड़ी। इसका मतलब विल्सन की खबर सही निकली। उसने विल्सन से कहा, "मैं उन बदमाश लोगों को रेजिडेंसी के बाहर भगा देता हूं। मुझे देखकर वे वहां से भाग जायेंगे। आप यहां रुकिये।"

लॉरेंस घोड़े पर सवार होकर अंग्रेज सिपाहियों को आदेश दे रहा था, "देसी सिपाहियों को पीछे खदेड़ते समय ध्यान में रखें कि वे गांव में घुसने न पायें। अगर वे गांव में छिप गये तो गांववासी उनका साथ देंगे। अगर ऐसा हुआ तो स्थिति पूरी तरह बिगड़ जायेगी। आपको याद होगा कि मेरठ का क्या हाल हुआ है।"

देसी सिपाही रेजिडेंसी के बंगलों को आग लगाते रहे। भोर होने की प्रतीक्षा में वे शहर के अंदर जाना भूल गये। पूरी रेजिडेंसी में आतंक छा गया था। सभी बागी सिपाही रेसकोर्स मैदान पर इकट्ठा हुए। वे आगे की योजना तय कर रहे थे। तभी वहां लॉरेंस अपनी पलटन सहित पहुंच गया। अंग्रेज सिपाहियों द्वारा गोलीबारी शुरू करते ही बागी सिपाही पीछे हट गये। बागी सिपाहियों का साथ देने हेतु कुछ घुड़सवार वहां पहुंचे। वे घोड़ों पर जख्मी बागी सिपाहियों को लादकर मैदान से बाहर ले गये। लॉरेंस के हाथों से बागी सिपाही भाग निकले। उसके हाथ सिर्फ साठ सिपाही लग पाये।

लखनऊ की तीन पलटनों से सिर्फ पांच सौ सिपाही अलग रहे। बाकी सभी दो हजार पांच सौ सिपाहियों ने बगावत की थी। बगावत होते ही गांव में उपद्रव शुरू हो गये। अंग्रेज औरतों ने बच्चों को लेकर रेजिडेंसी में शरण ली। रेजिडेंसी के सामने तोपें रखी गयी थीं। रेजिडेंसी की तरफ जाने की हिम्मत बागी सिपाही नहीं कर पाये। लखनऊ के सिपाहियों ने बगावत की और आसपास के अनेक जागीरदारों के सिपाहियों ने उनका साथ दिया। दस हजार सिपाहियों ने लखनऊ को घेर लिया था। लॉरेंस ने स्वयं पर संयम रखा। वह अपने साथियों को धीरज दे रहा था।

एक दिन लॉरेंस अपनी कचहरी में काम कर रहा था। यकायक आग का एक गोला उसके टेबुल के पास आकर गिरा। कचहरी धुएं



से भर गया। विल्सन ने देखा कि लॉरेंस का पेट और बायीं जांघ पूरी तरह फट गयी है। उसने तुरंत अपने पद पर मेजर बैंक्स को कमिश्नर और कर्नल इंग्लिस को सेनानी के पद पर नियुक्त किया। लॉरेंस के बचने की उम्मीद बिलकुल नहीं थी। 4 जुलाई को लॉरेंस की मौत हो गयी।

लॉरेंस की मौत के बाद चौबीस बीघा परिसर में अवस्थित रेजिडेंसी में खलबली मच गयी। कर्नल इंग्लिस ने घटना के बारे में सिपाही के हाथ संदेश भेज दिया। जवाब में हैवलॉक ने लिखा था - "हम एक महीने तक लखनऊ पहुंच नहीं पायेंगे।"

इधर रेजिडेंसी के सभी अंग्रेज नागरिक हैवलॉक की मदद की राह ताक रहे थे। लखनऊ के अलावा आगरा ने भी हैवलॉक से मदद मांगी थी। लेकिन हैवलॉक दोनों जगहों पर मदद भेजने में लाचार था। इसी कशमकश के बीच नील ने खबर लायी, "नाना साहब पेशवा बिठूर के चार हजार सिपाहियों के साथ कानपुर पर हमला करने निकल पड़ा है।"

बिठूर के इलाके में नाना साहब पेशवा और हैवलॉक के सिपाहियों के बीच घमासान लड़ाई हुई। काफी देर तक दोनों तरफ से हमले होते रहे। आखिर हैवलॉक की जीत हुई। नाना साहब के सिपाही जंगल की ओर भाग निकले। बिठूर पर कब्जा करने के लिए हैवलॉक कानपुर की ओर निकल पड़ा। 4 अगस्त को उसे कलकत्ता से खत मिला। उसमें लिखा था-

"कानपुर और दानापुर की सेना के लिए मेजर जनरल सर जेम्स आउट्रम को सेनानी पद पर नियुक्त किया जाता है।"

इस पत्र में हैवलॉक की वफादारी और बहादुरी के बारे में कोई जिक्र नहीं था। हैवलॉक नाराज हुआ। 15 सितंबर के दिन आउट्रम कानपुर पहुंचा। पदभार संभालने के तुरंत बाद उसने घोषणा की-"लखनऊ मुहिम की बागडोर हैवलॉक संभाल लेंगे।"

आउट्रम का यह बड़प्पन देखकर हैवलॉक गदगद हुआ। 19 सितंबर को हैवलॉक ने कानपुर छोड़ा। गंगा पार करके वह लखनऊ की तरफ रवाना हुआ। लखनऊ में उसके अंग्रेज साथी बदतर जीवन

जी रहे थे। यह जानकर हैवलॉक बहुत दुखी हुआ। इसी दौरान उसे इंग्लिस से दूसरा खत मिला। हैवलॉक बशीरगंज के आगे निकल रहा था। मुसलाधार बारिश ने उसका रास्ता रोक लिया। सिपाहियों की चाल धीमी पड़ गयी।

दूसरे दिन बारिश रुक गयी। उसके सिपाही आलमबाग तक पहुंच गये थे। अब वहां से लखनऊ सिर्फ दो मील की दूरी पर था। इसी जगह आउट्रम, नील और हैमिल्टन-तीनों सेनानी इकट्ठा हुए। हैवलॉक ने लड़ाई की योजना समझायी। उसी वक्त हैवलॉक के घोड़े को किसी ने निशाना बना दिया। हैवलॉक पर अब तक सात हमले हो चुके थे और उसके सात घोड़े खत्म हुए थे। हैवलॉक दूसरे घोड़े पर सवार हुआ। आउट्रम ने ललकारते हुए कहा, "ईश्वर का नाम लेकर रेजिडेंसी की ओर चलिए!"

गोलीबारी में अंग्रेज सिपाही नीचे लुढ़क रहे थे। हैवलॉक की पलटन जैसे-तैसे आगे बढ़ रही थी। हैवलॉक रेजिडेंसी के पास पहुंचा। तोपें और गोलियों से ध्वस्त रेजिडेंसी का दरवाजा बहुत दिनों के बाद खुला। रेजिडेंसी से आजाद हुए अंग्रेजों ने हैवलॉक का गर्मजोशी के साथ स्वागत किया। हैवलॉक बागी सिपाहियों का घेरा खत्म करने में सफल हुआ। इंग्लिस से हाथ मिलाकर उसने कहा, "यह सब ईश्वर की कृपा है।" 25 सितंबर 1857 की रात रेजिडेंसी में क्रिसमस की तरह उत्सव मनाया गया।

दिल्ली में उपद्रव

दिल्ली में दिन भर दंगा-फसाद होता रहा। इससे परेशान होकर अंग्रेजों ने दिल्ली के बाहर एक पहाड़ी पर पनाह ली। खुले मैदान में तंबू लगाया गया था। आलीशान जिंदगी जीनेवाले अंग्रेज निर्वासित की तरह दयनीय जीवन बिता रहे थे। सभी को घर की याद सता रही थी।

दिल्ली में दंगा-फसाद शुरू हुए बहुत दिन गुजर गये। जून गुजर गया, जुलाई आ गया। फिर भी अंग्रेजों के हाथ दिल्ली नहीं आ रही थी। भीषण गर्मी के बाद मुसलाधार बारिश में अंग्रेजों के बुरे हाल हुए। पहाड़ी से दिल्ली नजर आ रही थी, लेकिन वहां पहुंचना नामुमकिन था। दिल्ली पर कब्जा करनेवाले सिपाहियों की तादाद उनसे कहीं ज्यादा थी। कलकत्ता से विल्सन को संदेश भेजा गया-"दिल्ली पर जल्द हमला करें, अन्यथा स्थिति और बिगड़ जायेगी।"

विल्सन अब हताश हुआ जा रहा था। बाहर से किसी भी प्रकार की मदद नहीं मिल रही थी। पहाड़ी पर जा बसे अंग्रेज और बागी सिपाहियों के बीच कभी-कभार गोलीबारी होती रही। दोनों तरफ के लोग घायल हो रहे थे। कुछ समय के लिए सन्नाटा छा जाता था।

कर्नल जोंस की छठी पलटन पर विल्सन की उम्मीद टिकी हुई थी। जून में हुए हादसे में बागी सिपाहियों ने पलटन के एक सौ पैंसठ सिपाहियों को गोली से भून दिया था। विल्सन चिंतित हुआ। अगर इसी तरह उसके सिपाही मारे जाते रहे तो लड़ाई जीतना मुश्किल हो

जायेगा। वह अपनी पत्नी से कह रहा था, "मेरा सिर चकरा रहा है। अब हमारा क्या होगा ? समझ में नहीं आता।" विल्सन दिन भर किसी पलटन की मदद की राह ताकता रहा।

कैप्टन हेनरी डेली पंजाब से टुकड़ी लेकर दिल्ली पहुंचा। उसके घुड़सवारों ने कमाल किया था। चार सौ अस्सी मील का फासला सिर्फ एक सौ बीस दिनों में पार किया। विल्सन ने डेली से पूछा, "आपके सिपाही थके हुए नजर आ रहे हैं। लड़ाई के लिए आप कब तैयार हो जायेंगे ?"

"सिर्फ आधे घंटे में।"

यह जवाब पाकर विल्सन की हिम्मत बढ़ गयी। नये साथियों को संबोधित करते हुए विल्सन ने कहा, "दिल्ली पर हमला करने के लिए हमें तीस-चालीस हजार सिपाहियों की जरूरत है। हम यहां से बागी सिपाहियों पर हमला कर रहे हैं। उनके पास बहुत बड़ी फौज है। हम उन पर हमला करने आगे बढ़ते हैं तो वे शहर का दरवाजा बंद कर देते हैं। हम पीछे हटने लगते हैं तो वे हमारा पीछा करते हैं। इसलिए शहर में घुस पाना मुश्किल हो गया है। हम यहां तोपखाने की बदौलत बेफिक्र हैं, वरना बागी सिपाही न जाने कब के पहुंच गये होते।"

एक दिन विल्सन बिगड़ गया। उसकी पत्नी ने पूछा, "कितने दिन दिल्ली की मुहिम पिछड़ती रहेगी ?" यह बात विल्सन को बहुत बुरी लगी। गुस्से में आकर उसने जवाब दिया-

"तुम भी उन लोगों के समान बातें करती हो जो लोग बिना सोचे-समझे बतिया रहे हैं! बागी सिपाहियों की चालीस हजार की फौज का सामना करना मुश्किल है। हमारे दो हजार सिपाही कब तक मुकाबला करते रहेंगे? शुक्र है कि हमने इस पहाड़ी को बचाकर रखा है। उल्टे आप हमें चिढ़ा रही हैं? मैं रात को सिर्फ तीन-चार घंटे सोता

हूं। बाकी समय सोचता रहता हूं। अब यह महसूस कर रहा हूं कि मेरी विचार करने की शक्ति ही नष्ट हो जायेगी।"

अगस्त महीना शुरू हो चुका था। दिल्ली के बाहर रहते तीन महीने गुजर चुके थे। हालात में कुछ तब्दीलियां नहीं हुई थीं। विल्सन के मन में कुछ अलग विचार कौंध रहे थे। दिल्ली में वक्त बिताकर कुछ भी हासिल नहीं होगा। किसी दूसरी जगह जाकर बहादुरी दिखायेंगे। इस विचार में मेजर बेअर्ड स्मिथ को गंभीर धोखा महसूस हुआ। उसने कहा, "अगर हम दिल्ली छोड़ देंगे, तो हमारा पंजाब से संपर्क टूट जायेगा। यह हमारी सबसे बड़ी भूल होगी।" स्मिथ के इस तर्क में दम था। विल्सन चकित होकर आदरपूर्वक स्मिथ की बातें सुनने लगा -

"दिल्ली कोई मामूली शहर नहीं है, बल्कि देश की राजधानी है। अगर हम दिल्ली छोड़ देंगे तो गलत संदेश फैल जायेगा। लोग समझ जायेंगे कि बागी सिपाहियों ने अंग्रेजों को राजधानी से भगा दिया है। इस बात पर पूरे देश में बगावत हो जायेगी। हमें और ज्यादा तोपें और गोला-बारूद चाहिए। हमारे दो हजार सिपाहियों के बलबूते लड़ाई जीतना नामुमकिन है। मैं मानता हूं कि हमें दस हजार सिपाहियों की जरूरत है, लेकिन इसके बावजूद दिल्ली छोड़ना हमें बहुत महंगा पड़ेगा। हमें इस बात को स्वीकार करना चाहिए।"

विल्सन ने स्मिथ की बात मान ली। उसने सोचा, 'हम होनी को टाल नहीं सकते। अब दिल्ली छोड़कर कहीं नहीं जायेंगे।' कुछ दिन गुजरने के बाद 14 अगस्त को ब्रिगेडियर जॉन निकल्सन पंजाब की पलटन लेकर दिल्ली पहुंचा।

दिल्ली शहर की सुरक्षा दीवार से आधे मील की दूरी पर हिंदूराव की हवेली बसायी गयी थी। विल्सन ने अपनी तोपें इस हवेली में लाकर बिठायी। हवेली के आसपास के इलाकों का मुआयना किया।

उसे लगा कि दिल्ली पर हमला करने लायक यही सही जगह है। उसने वहीं पर अपनी कचहरी शुरू की। कामकाज के पहले दिन ही उसने मेजर रीड और मेजर स्मिथ के साथ विचार-विमर्श किया। दोनों निकल्सन से पहली बार मिल रहे थे। 'पंजाब का शेर' नाम से सुपरिचित बहादुर सेनानी निकल्सन से मिलने के लिए दोनों उत्सुक थे। निकल्सन ने दोनों के साथ बहुत कम बात कीं। इस पर मेजर रीड ने अपनी राय जाहिर की, "यह आदमी भले ही बहादुर है, लेकिन घमंडी है। वह अपने को होशियार और दूसरों को मूर्ख समझता है।" स्मिथ ने रीड को समझाया, "यह हमारी पहली मुलाकात है। शायद दूसरी मुलाकात में वह खुलकर बात करेगा।"

"अगर ऐसा होता है, तो अच्छा ही होगा। लेकिन मेरी किसी आदमी के बारे में पहली राय कभी झूठ साबित नहीं होती। यह मेरा अनुभव है।"

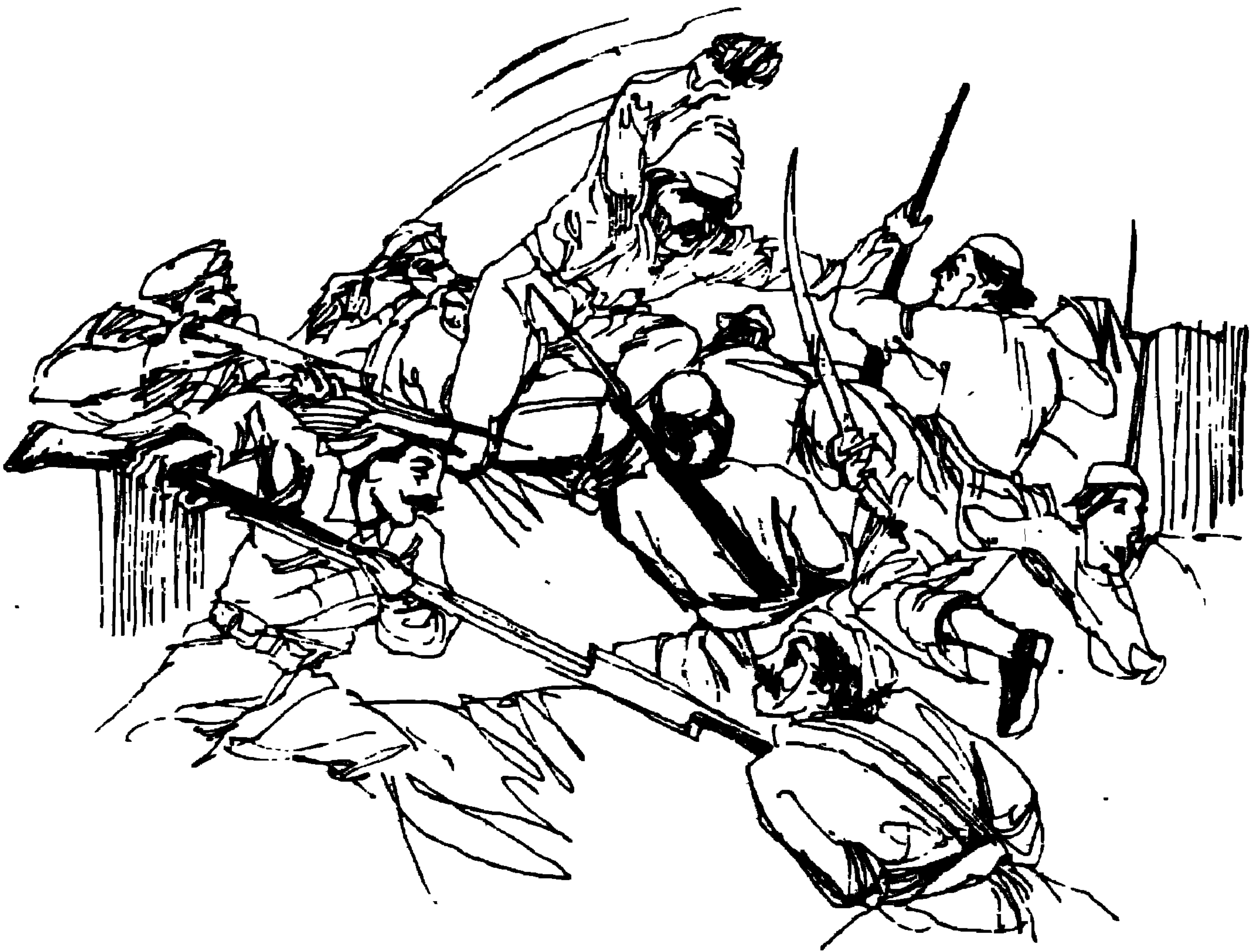
स्मिथ इस बात को आगे बढ़ाना नहीं चाहता था। रीड भी तो झूठ नहीं बोल रहा था। हिंदुस्तान में आये हुए निकल्सन को बीस साल हो गये थे। फिर भी अब तक वह यहां के लोगों से घुलमिल नहीं पाया था। देसी सिपाहियों के साथ उसका व्यवहार काफी सख्त रहता था। देसी सिपाही हमेशा आपस में बातें करते, "ईश्वर इस पत्थरदिल आदमी को कलेजा देना भूल गया है।"

11 मई 1857 के दिन दिल्ली में जो दंगा-फसाद हुआ था, उससे यह घमंडी आदमी बिगड़ गया था। पेशावर के कमिश्नर हर्बर्ट एडवर्ड्स को लिखे पत्र में उसने लिखा था-

"इन लोगों की यह मजाल कि वे हमारे लोगों पर हाथ उठायें? ये सब जंगली लोग हैं। मैंने सुना है कि हमारी सरकार इन लोगों को पेड़ पर लटकाकर फांसी दे रही है। मेरी राय है कि इन गुनहगारों को

यह सजा कुछ भी नहीं है। मैं इन बदमाशों की खाल छुरी से उधेड़ना चाहता हूं। उनको जिंदा ज़लाना चाहिए। अगर मुझे इजाजत मिले तो मैं पीछे नहीं हटूंगा।"

एडवर्ड्स ने यह पत्र कलकत्ता भेज दिया। यह पत्र पढ़कर कलकत्ता मुख्यालय ने फैसला किया कि दिल्ली की मुहिम निकल्सन को सौंपी जाय। निकल्सन के आते ही हिंदूराव हवेली की तोपें दिल्ली की ओर आग बरसाने लगीं। कुछ अंग्रेज सिपाही बागी सिपाहियों की नजर चुराकर दिल्ली में घुस जाते थे और किसी मकान में छिपे बागी सिपाही को बंदूक की संगीन से खत्म कर देते थे। अंग्रेज सिपाही के हाथ में बंदूक देखकर बागी सिपाही डर जाते थे। इसी दौरान कुछ देसी सिपाही हिंदूराव की हवेली में घुस गये और वहां बेखबर अंग्रेज सिपाहियों पर हमला किया।



लड़ाई के दिनों में कभी-कभी दिल्लीवासियों का अच्छा मनोरंजन हो जाता था। वे देखते कि बागी सिपाहियों का नेतृत्व कोई बहादुर औरत कर रही है। 'दिल्ली की सुंदरी' नाम से मशहूर एक जवान लड़की हमेशा सबसे आगे रहती। रामपुर की दो बूढ़ी औरतों ने भी लड़ाई का नेतृत्व किया था। इस ढलती उम्र में बूढ़ी औरतों की बहादुरी देखकर सेनानी सैयद मुबारकशाह चकित हो जाता था।

बागी सिपाहियों के हमले निरंतर बढ़ते चले जा रहे थे। यह देखकर विल्सन हैरान हुआ। उसने अपना एक जासूस शहर में भेज दिया। जासूस की खबर सुनकर अंग्रेज सेनानी भौंचक्का रह गया। बागी सिपाहियों ने गोला-बारूद के अलावा उखली तोपों का निर्माण भी शुरू कर दिया था। उन्होंने पुरानी तोपखाना भट्ठी की जगह नयी भट्ठी शुरू की थी। उन्होंने राकेट भी तैयार किये थे। बागी सिपाहियों की तैयारी देखकर विल्सन को आश्चर्य हुआ। जिन्हें वह जंगली समझ रहा था, उन लोगों ने यह हुनर कहां सीखी? यह बात उसे समझ में नहीं आ रही थी। आखिर आदमी संकट आने पर अपना रास्ता खुद ढूंढ़ लेता है।

दिल्ली की मुहिम धीमी पड़ गयी थी। बादशाह ने जान लिया था कि फिरंगियों के तेज आक्रमण का सामना हमारे सिपाही नहीं कर सकते। वह दिल्ली से भागने के बारे में सोचने लगा। बागी सिपाहियों के सरदारों को खबर मिली। उन्हें मालूम हुआ कि बादशाह जल्द ही लाल किला छोड़ने जा रहा है। वे बादशाह के पास दौड़े-दौड़े गये और कहा, "बादशाह हुजूर! आप दिल्ली के शहंशाह हैं। आपका बरताव शहंशाह की तरह होना चाहिए। यहां आप उल्टे गुनहगार की तरह मुंह छिपाकर भागना चाहते हैं। लाल किला छोड़कर आप कहां जायेंगे? कंपनी सरकार आपको ढूंढ़ लेगी और कैदी बना देगी। सारी उम्र

बदनामी आपका पीछा करेगी। खुद्दार आदमी के लिए बदनामी मौत के समान है। हम दिल्लीवासी देखना चाहते हैं कि आखिर तक बादशाह ने तलवार चलायी। इस जहान को खुदा हाफिज करने से पहले आपका नाम रोशन हो जाये। ऐसी कोई बहादुरी दिखा दें।''

ये बातें सुनकर बादशाह चेत गया। उसने बागियों की बात मान ली और कहा, ''आपकी बातों से मैं सहमत हूं। मैं आज दोपहर 12 बजे किले के प्रवेशद्वार पर आ जाता हूं। आप सभी वहां पर अपने सिपाहियों को बुलाइये। हम सभी मिलकर फिरंगियों पर हमला करेंगे। मैं मुहिम की बागडोर संभाल लूंगा।''

बयासी वर्ष के बूढ़े बादशाह की यह बात बिजली की तरह फैल गयीं। पूरी दिल्ली की जनता में जोश आ गया। जनता ने जो हाथ आया वह हथियार - तलवार, बंदूकें आदि लेकर लाल किले के मैदान में आ गयी। जनता ने बादशाह की जयजयकार की। आजादी की लड़ाई के लिए सत्तर हजार लोगों ने बादशाह का साथ देने का फैसला किया। वे सभी बादशाह के आगमन की प्रतीक्षा कर रहे थे।

बादशाह ठीक 12 बजे लाल किले के प्रवेश द्वार पर आ पहुंचा। लोगों ने हर्षोल्लास के साथ हाथ उठाकर अभिवादन किया। सभी ने बादशाह की जयजयकार की। बादशाह अब आगे बढ़ रहा था। तभी उनका दोस्त एहसानुल्ला खान ने बादशाह के कानों में हल्के स्वर में कहा, ''बादशाह हुजूर, आप यहीं रुकिये। सामनेवाले मकानों में अंग्रेज सिपाही छिपे हैं। कोई आपको निशाना बना सकता है। इस समय कुछ भी हो सकता है। आपकी जान को खतरा है।''

बादशाह रुक गया। वह पीछे हटा। लोगों ने दो घंटों तक बादशाह का इंतजार किया। आखिर नाराज होकर वे घर लौटने लगे। बादशाह ने रात के अंधेरे में लाल किला छोड़ा। वह कुछ नजदीकी लोगों को

साथ लेकर पांच मील दूरी पर हुमायूं की कब्र के पास पहुंचा। अब वह पूरी तरह बेवतन, बेसहारा हो गया था। कंपनी सरकार ने बादशाह की खोज की। कुछ ही घंटों में लेफ्टिनेंट हॉडसन हुमायूं की कब्र के पास पहुंचा। उसने बादशाह का आह्वान किया-"आप हमारी शरण में आ जाइये। हम आपके मामले में नरमी से पेश आयेंगे। मैं सरकार की ओर से आपको अभयदान देता हूं।"

बादशाह फांसी का फंदा टालना चाहता था। उसने हॉडसन से अभयदान-पत्र मांगा। बादशाह पालकी में बैठकर लाल किले में वापस लौट पड़ा। उसके साथ उसकी लाड़ली बीबी जीनत महल भी थी। बादशाह को लाल किले में कैद कर दिया गया।

इधर चांदनी चौक पर आम लोगों के सामने बादशाह के सभी लड़कों को फांसी पर चढ़ा दिया गया। छोटे नवाब मिर्जा जवानबख्त को बख्श दिया गया। दिल्ली में लश्करी कानून लागू किया गया। बहुत दिनों तक फांसी का सिलसिला जारी रहा। अनगिनत बेगुनाह लोगों की हत्या हुई। कुछ अंग्रेज अधिकारियों ने महसूस किया कि यह ज्यादती हो रही है। जॉन लॉरेंस ने गवर्नर जनरल लार्ड कैनिंग को लिखा-

"आजकल दिल्ली में आतंक फैला हुआ है। जो कुछ हो रहा है वह बिलकुल बेतुका है। मैं मानता हूं कि गुनहगार लोगों को सजा होनी चाहिए। लेकिन हम हर रोज हजारों बेगुनाह लोगों को फांसी पर चढ़ाकर क्या हासिल करेंगे ? सिर्फ बदले की खुशी! इससे जनता और सरकार का फासला बढ़ जायेगा। इससे भविष्य में बुरा असर हो सकता है।"

कैनिंग ने यह पत्र फाड़ डाला। दिल्ली की जनता की क्रूर हत्याएं होती रहीं। 1858 के फरवरी में लश्करी कानून वापस लिया गया।

इस कानून को हटाये जाने के पूर्व कुछ ही घंटों में चार सौ दिल्लीवासियों को गोलियों से भून दिया गया। दिल्ली के सेनानी जनरल पेनी ने कहा, "अब थोड़ा-बहुत हिसाब पूरा हो गया है।"

राजधानी का शाही खजाना लूटते समय अंग्रेज बेहया हो गये थे। खानदानी रईस होने की डींग मारने वाले अंग्रेजों ने भारी लूट मचायी। लाल किले का खजाना खाली हो गया। लाल किले की छत और दीवारें ही बच पायीं। लाल किला अब सुनसान हो गया। 1857 के बाद इतिहास के पन्नों पर हत्याएं, फांसी और खून के धब्बे लग गये। यह खून के धब्बे कुछ देसी सिपाहियों एवं कुछ साधारण लोगों के थे, तो कुछ अंग्रेजों के खून से भी रंगे हुए थे। दिसंबर का महीना शुरू हो गया था। दिल्ली के आसपास के इलाकों में अंग्रेजों ने फिर कब्जा कर लिया था। कंपनी सरकार को शांति नहीं मिल रही थी। अवध की लड़ाई भी खत्म नहीं हुई थी।

तबाह लखनऊ

25 सितंबर को भागे हुए बागी सिपाही कुछ ही दिनों में लखनऊ लौट आये। दिल्ली से भाग निकले बागी सिपाही भी लखनऊ के साथियों से मिल गये। लखनऊ के बागी सिपाहियों की संख्या एक लाख हो गयी। दूसरी तरफ आउट्रम के पास बहुत कम सिपाही थे। बागियों की रेजिडेंसी को चारों ओर से घेरा डाले जाने की संभावना बढ़ गयी। बदलते हुए हालात को देखकर आउट्रम मन ही मन घबरा गया। शहर के अलग-अलग भागों में फैले जख्मी सिपाहियों को इकट्ठा किये बिना आउट्रम लखनऊ छोड़ नहीं सकता था। रेजिडेंसी में जमा भीड़ के कारण पड़ोस के मकानों पर भी कब्जा करना जरूरी हो गया था। पड़ोस की कोठी, फरहतबक्ष, चंतारी मंजिल आदि मकान उन्होंने अपने कब्जे में ले लिये।

बागी सिपाहियों की तोपें रेजिडेंसी पर गोले बरसा रही थीं। जख्मी सिपाहियों की संख्या बढ़ रही थी। अस्पताल में दवाइयों की भी कमी हो गयी थी। जख्मी लोगों का इलाज करना मुश्किल हो गया था। ढाई सौ नागरिकों की जान अब किस तरह बचायें ? आउट्रम चिंता में डूब गया। जख्मी सिपाहियों के निवास की व्यवस्था करने के लिए आउट्रम ने एक घिनौने उपाय का अवलंब लिया। रेजिडेंसी के पास वाली इमारतों में देसी सिपाहियों को रखा गया था। लखनऊ मुहिम के समय जो बागी सिपाही आउट्रम के हाथ लग गये थे, उनके नसीब

में यह बंदी जीवन आ गया था। आउट्रम ने जॉर्ज ब्लेक को आदेश दिया, "सभी बंदी बागी सिपाहियों का कत्ल कर दो। हमारे जख्मी सिपाहियों की व्यवस्था उनके खाली स्थान पर की जायेगी।"

ब्लेक बंदी सिपाहियों को हथकड़ी पहनाकर गोमती के किनारे ले गया। उसने अपने सिपाहियों को आदेश दिया, "जो कोई बंदूक चलाकर निशाना साधना चाहता है, वह बागी सिपाहियों पर गोली चला दे।"

फिर एक घिनौना हत्याकांड हुआ। गोमती का पानी बंदी सिपाहियों के खून से लाल हो गया। यह खबर गांववालों को मालूम हो गयी। लखनऊ के लोगों का गुस्सा आसमान छूने लगा। गुस्से से पागल हुए लोगों ने अंग्रेजों का सिर तलवार से काटकर काठी पर लटका दिया।

लोग कत्ल किये नरमुंड लेकर ढोल-बाजे के ताल पर लखनऊ में घूम रहे थे। रेजिडेंसी के अंग्रेज सिपाहियों में दहशत फैल गयी। शहर में जाकर जख्मी सिपाहियों को उठाकर रेजिडेंसी में लाने की हिम्मत अब किसी में नहीं थी। रेजिडेंसी के लोग भूख के मारे बदहाल हुए जा रहे थे। आउट्रम रसद की कमी से लाचार था। आउट्रम ने लखनऊ छोड़ने की योजना बना ली। अक्तूबर गुजर गया था। इसके बावजूद आउट्रम अपने लोगों के साथ रेजिडेंसी में जान बचाकर बाहर से आनेवाली रसद की प्रतीक्षा कर रहा था।

लॉर्ड कैनिंग फिर एक बार संकट में फंस गया। लखनऊ में बरबादी का सिलसिला जारी था। सर कॉलीन कैंपबेल ने मुख्य सेनापति का भार स्वीकार किया था। लखनऊ की बिगड़ी हुई हालत देखकर कैनिंग ने कैंपबेल को मुहिम की बागडोर सौंप दी।

कैंपबेल नवंबर के पहले हफ्ते में कानपुर पहुंचा। वह अब लखनऊ जाने की तैयारी कर रहा था। तभी उसे एक खबर मिली।

इस खबर के अनुसार ग्वालियर के महाराज जयाजीराव सिंधिया अपनी फौज लेकर नाना साहब पेशवा की सहायता के लिए निकल पड़े हैं। यह फौज नाना साहब को कालपी में आकर मिलनेवाली थी। कैंपबेल चकरा गया। अब लखनऊ जाये या कालपी? उसने निर्णय लिया कि नाना साहब से बाद में निपट लेंगे। पहले लखनऊ पहुंचना जरूरी था। उसने पांच सौ अंग्रेज सिपाहियों को कानपुर की रक्षा के लिए भेज दिया। शेष सिपाहियों को लेकर कैंपबेल लखनऊ की ओर कूच कर गया।

मुख्य सेनापति को देखकर रेजिडेंसी के लोगों ने चैन की सांस ली। वहां के एक हजार जख्मी और बीमार सिपाहियों तथा औरतें, बच्चों को हटाकर कानपुर में पहुंचाना आवश्यक था। बीच राह में बागी सिपाहियों का खतरा था। बागी सिपाही कुछ स्थानों पर शरण पा रहे थे। लेकिन अब तक उन सिपाहियों पर नियंत्रण संभव नहीं हुआ था।

सभी अंग्रेज औरतें अपने बच्चों को लेकर बैलीगार्ड गेट पार करके लखनऊ से रवाना हुईं। दो दिनों के बाद अंग्रेज सिपाहियों ने भी कानपुर का रास्ता अपना लिया था। लखनऊ की रेजिडेंसी अब सुनसान हो गयी। बीच रास्ते में बीमार हैवलॉक की मौत हो गयी। कैंपबेल ने आउट्रम को आलमबाग रुकने का आदेश दिया। उसने कहा, ''आप यहां रुकिये। सबको लेकर कानपुर पहुंचने में काफी वक्त लगेगा। मैं तुरंत कानपुर होकर आता हूं।''

आउट्रम के पास चार हजार सिपाहियों की फौज रखकर कैंपबेल कानपुर चला गया। उसने अपने साथ तीन हजार सिपाहियों की फौज रखी थी। कैंपबेल के मन में डर के बादल मंडरा रहे थे। कानपुर को बागी सिपाहियों ने घेर लिया था। उसने अपनी चाल तेज कर दी।

कानपुर पहुंचने तक शाम हो गयी। गंगा नदी का पुल बचा हुआ था। यह देखकर कैंपबेल ने चैन की सांस ली। लेकिन शहर का नजारा देखकर उसके होश उड़ गये। शहर के मकानों में आग लगा दी गयी थी। आसमान में धुएं का गुबार उठ रहा था। कैंपबेल ने एक राहगीर से पूछा, "यह आग किसने लगायी है?"

"तात्या टोपे ने।"

"कौन है यह तात्या टोपे ?"

"नाना साहब का नया मुख्य सेनापति।"

कैंपबेल ने यह नाम पहली बार सुना था। अंग्रेजों ने नाना साहब पेशवा को कानपुर छोड़ने पर मजबूर किया था। इस बात का सबसे



ज्यादा दुख तात्या टोपे को हुआ था। उसने शपथ ली कि वह नाना साहब को उसी गौरव के साथ कानपुर में वापस ले आयेगा। वीर तात्या टोपे नाना साहब का सबसे करीबी और निष्ठावान सेवक था।

तात्या टोपे के सिर पर भूत सवार हुआ था। उसने ठान लिया कि श्रीमंत नाना साहब को पेशवा पद का गौरव दिला कर रहूंगा। तात्या बहादुर सिपाही था। उसमें अद्‌भुत शक्ति थी। उसने सबसे कम समय में पच्चीस हजार सिपाहियों की फौज खड़ी कर दी। लखनऊ जाते समय कैंपबेल ने कानपुर की बागडोर मेजर जनरल चार्ल्स विंडहम को सौंपी थी। तात्या टोपे कानपुर पर हमला करने निकल पड़ा था। विंडहम बेखबर था जिसके कारण वह पहली लड़ाई बिना लड़े हार गया।

तात्या टोपे को मालूम हुआ कि कैंपबेल नदी के पार पहुंच गया है। तात्या टोपे ने कैंपबेल की शिविर की दिशा में तोपें चलायीं। कैंपबेल के तोपखाने का प्रमुख कैप्टन विलियम पॉल ने जवाबी तोपें चलानी शुरू कीं। बागी सिपाहियों की छोटी तोपों के मुकाबले में पॉल की तोपें कहीं अधिक सशक्त और लंबी थी। पॉल की तोपों के सामने तात्या टोपे की तोपें बेकाम हुईं। कैंपबेल जख्मी सिपाहियों और औरतों, बच्चों को लेकर छावनी की ओर निकल पड़ा।

छावनी में अजीब-सी उदासी छा गयी। वहां का नजारा खौफनाक था। अधजले मकानों की दीवारों पर धुओं की परत चढ़ गयी थी। टेबुल, कुर्सियां, दरवाजे ध्वस्त होकर बिखरे पड़े थे। कुछ पेड़ धराशायी हुए थे। छावनी में मौत का सन्नाटा छाया था। यह दृश्य देखकर औरतें रोने लगीं। चार दिनों के बाद बैलगाड़ियों की व्यवस्था की गयी। छावनी की सभी औरतें, बच्चे गाड़ी पर सवार हुए। बैलगाड़ियों ने इलाहाबाद का रास्ता पकड़ा। कैंपबेल अपने आपसे

कह रहा था, 'चलो, अच्छा हुआ, मैं अब बेफिक्र होकर दुश्मनों का मुकाबला कर सकूंगा।'

तात्या टोपे की फौज में जयाजीराव सिंधिया के सिपाही सबसे बहादुर सिपाही थे। दिल्ली-इलाहाबाद को जोड़ने वाले कालपी मार्ग पर तात्या की फौज ने अड्डा जमाया हुआ था। कैंपबेल ने रणनीति तैयार की। इस योजना के अनुसार उसकी फौज गंगा का नहर पार करके कालपी पहुंचेगी। वे वहां से पीछे हटकर सिंधिया के सिपाहियों के लौटने का मार्ग बंद कर देंगे।

कैंपबेल की फौज में पांच हजार सिपाही और छह सौ घुड़सवार थे। इससे भी महत्वपूर्ण बात यह थी कि उसके पास इंग्लैंड से आयात की हुई नयी तकनीक की पैंतीस तोपें थीं। तात्या के पास सिपाहियों का बल ज्यादा था। लेकिन कैंपबेल की तुलना में उसके पास रसद सामग्री बहुत कम थी।

कैंपबेल ने 6 दिसंबर को कानपुर पर हमला किया। शहर के बीच वाले भाग और गंगा की धार के दरम्यान बागी सिपाहियों पर तोप के गोले बरसने लगे। तात्या ने अपनी फौज नहर की दिशा में मोड़ दी। पॉल ने तोपों की दिशा तात्या की ओर की। पैदल सेना ने बागी सिपाहियों को घेर लिया। सिंधिया के सिपाही पीछे हटने पर मजबूर हुए। कैंपबेल ने इन सिपाहियों के पीछे मैंसफिल्ड को दौड़ाया। लेकिन नदी पार करने तक बागी सिपाही भाग निकले। मैंसफिल्ड के हाथ उनकी पंद्रह तोपें लग गयीं। बागी सिपाहियों का पीछा करना बहुत मुश्किल था।

कैंपबेल ने सोचा कि पूरी गंगा घाटी पर ही नियंत्रण रखना होगा। पीछा करने में काफी वक्त बरबाद हो सकता था। इस इलाके के फतेहगढ़ शहर पर बागी सिपाहियों ने कब्जा कर लिया था। कैंपबेल

ने अपनी कुछ पलटनें फतेहगढ़ भेज दी। फतेहगढ़ का सामरिक महत्व तात्या टोपे ने जान लिया था। वहां पर तात्या ने बड़ी फौज तैनात कर दी।

6 दिसंबर से लेकर 6 जनवरी के बीच तात्या ने धीरज रखकर अंग्रेजों का सामना किया। तात्या टोपे के पास साधन-सामग्री की कमी थी। इस विषम परिस्थिति में तात्या ने जान की बाजी लगा दी। केवल आत्मबल के सहारे लड़ाई जीती नहीं जाती। इसके लिए बंदूकें, तोपें आदि सरीखे हथियारों की सहायता भी महत्वपूर्ण होती है।

6 जनवरी को अंग्रेजों ने फतेहगढ़ पर विजय प्राप्त किया। कैंपबेल का हौसला बढ़ गया। वह आसपास के सभी इलाकों पर नियंत्रण स्थापित करना चाहता था। उसने इस मुहिम की ज़िम्मेदारी लेफ्टिनेंट रॉबर्ट विंडाल्फ को सौंप दी। महत्वाकांक्षी विंडाल्फ यह सुनहरा मौका गंवाना नहीं चाहता था। वह मुख्य सेनापति की सहमति हासिल करना चाहता था। उसने गांव-गांव जाकर मकानों में आग लगाकर तबाही मचा दी तथा वहां के बेगुनाह लोगों को गोलियों से भूनने लगा।

माहौल दहशत से भर गया। गांववासी भाग रहे थे और विंडाल्फ के सिपाही उन पर गोलियां बरसा रहे थे।किसी ने इस बात पर नाराजगी जाहिर की, तब विंडाल्फ कहने लगा, "ये सभी बदमाश, धोखेबाज लोग हैं। वे बागियों की हर संभव मदद करते हैं। इसलिए बागियों की तरह वे भी गुनहगार हैं। इस हरकत की सजा सख्त होनी ही चाहिए।"

विंडाल्फ ने फतेहगढ़ से लेकर कानपुर तक फैले गांवों में आग लगा दी। गांव के बेगुनाह लोगों का कत्ल किया जा रहा था। शाही अवध की शान धूल में मिल रही थी। विंडाल्फ की इस 'बहादुरी' की

खबरें पढ़कर मुख्य सेनापत्ति कैंपबेल खुश हुआ।

गंगा घाटी पर नियंत्रण पा लेने के बाद कैंपबेल रोहिलखंड पर कब्जा करना चाहता था। लॉर्ड कैनिंग को यह बात पसंद नहीं आयी। उसने मुख्य सेनापति को चेतावनी दी-

"हमने अब तक अवध पर पूरी तरह कब्जा नहीं किया है। अवध की कई महत्वपूर्ण ठिकानों पर बागियों का नियंत्रण है। अगर हम रोहिलखंड की ओर जायेंगे तो अवध हमारे हाथों से निकल जायेगा। बागियों को मोरचा जमाने में सहूलियत हो जायेगी।"

कैंपबेल ने फिर एक बार लखनऊ का रास्ता पकड़ा। फैजाबाद के मौलवी की फौज आउट्रम पर हमला कर रही थी। आलमबाग की पलटन पर हमले बढ़ रहे थे। कैनिंग ने वहां पर कैंपबेल को भेज दिया। गवर्नर जनरल ने मान लिया था कि जब तक अवध की राजधानी पर कंपनी सरकार का झंडा नहीं फहराता है, तब तक बगावत खत्म नहीं होगी। कैनिंग ने कैंपबेल की सहायता के लिए कलकत्ता से ज्यादा टुकड़ियां भेज दीं।

1858 के फरवरी में कैंपबेल लखनऊ की ओर आगे बढ़ रहा था। उसके पैदल फौज में 17 बटालियन, घुड़सवारों की 28 टुकड़ियां और 134 तोपें शामिल थीं। कंपनी सरकार के इतिहास में पहली बार इतनी विशाल फौज को एकत्रित किया गया था। 2 मार्च के दिन कैंपबेल लखनऊ के पास दिलखुश पहुंचा। आउट्रम के सिपाही और बागी सिपाहियों के बीच आलमबाग में घमासान लड़ाई हुई। आलमबाग में बागी सिपाहियों की लाशें बिछ गयीं।

दिलखुश पर कब्जा कर लेने के बाद कैंपबेल ने सेना के दो भाग किये। फौज के एक भाग को आउट्रम को सौंपा गया। वह गोमती पार करके इस्माईलगंज की ओर कूच कर गया। आउट्रम वहां से

होकर फैजाबाद रवाना हुआ। आगे चलकर उसकी फौज ने रास्ता बदल लिया और 'चकार कोठी' की ओर रुख किया।

फौज के दूसरे भाग का नेतृत्व कैंपबेल ने संभाल लिया था। वह पश्चिम दिशा की तरफ से कैसरबाग की ओर कूच कर गया। घने जंगल से रास्ता निकालकर वह 9 मार्च को चकार कोठी पहुंचा। वहां पहुंचते ही बागी सिपाहियों ने उन पर गोली चलायी। इस गोलीबारी का जवाब कैंपबेल ने तोप चलाकर दिया। तोप गोले बरसने पर बागी सिपाही पीछे हट गये। अंग्रेज सिपाहियों ने उनका पीछा किया।

कंपनी सरकार की फौज के सामने बागी सिपाहियों की संख्या बहुत कम थी। बागी सिपाहियों को एक तरफ से आउट्रम ने तो दूसरी तरफ से कैंपबेल के सिपाहियों ने घेर लिया। बागी सिपाही प्रतिकार करने में असफल हुए। अब शरण लेना भी मुश्किल था।

अंग्रेज सिपाहियों में बदले की भावना भड़क उठी। बागी सिपाहियों को अपने अधिकारियों के पास सौंपने के बजाय उन्होंने उनका कत्ल करना शुरू किया। अंग्रेज सिपाही बदले की आग में पागल हो रहे थे। उन्होंने अनगिनत बागी सिपाहियों को मौत के घाट उतार दिया। उनके घर जलाये गये जो बागी सिपाहियों को शरण देते थे। सभी जगहों पर अधजले मकान और खून के धब्बों से रंगी दीवारें नजर आ रही थीं।

अवध की राजधानी की शान ध्वस्त हो गयी। जो हाल दिल्ली शहर का हुआ वही लखनऊ का भी हुआ। बागियों का सफाया हो जाने के बाद अंग्रेज सिपाहियों ने लूटमार शुरू की। वे अमीरों के मकानों में घुसकर जेवरात लूटने लगे। लोग डरकर बाहर का दरवाजा बंद कर देते थे। अंग्रेज सिपाही खिड़की से कूदकर मकानों में घुसने लगे। अंग्रेज सिपाहियों की जेबें सोना-चांदी, हीरा-मोती से लबालब भरने लगीं। वे मालामाल हो गये। 21 मार्च 1858 के दिन अवध की

राजधानी लखनऊ पर कंपनी सरकार का झंडा फहराने लगा। इस घटना पर लंदन के 'टाइम्स' समाचार पत्र ने लिखा था-

"इस जीत के कारण आउट्रम और कैंपबेल के सिपाही मालामाल हो गये। उन्होंने केवल छह दिनों के भीतर साठ लाख रुपये कीमत की संपत्ति लूट ली।"

सर कॉलीन कैंपबेल ने लखनऊ में एक विजेता की तरह प्रवेश किया।

सर क़ॉलीन कैंपबेल और आउट्रम के बीच बातचीत चल रही थी, तभी खबर पहुंची कि 'रोहिलखंड के बागियों ने बहादुर खान के नेतृत्व में चढ़ाई की मुहिम शुरू कर दी है।' कैंपबेल को बरेली की ओर जाना पड़ा।

मर्दानी झांसीवाली का दर्शन

कैंपबेल ने रोहिलखंड मुहिम की बागडोर ब्रिगेडियर वाल्पोल को सौंप दी। वाल्पोल अपनी पलटन लेकर बरेली की ओर चल पड़ा। वह नौ दिनों के बाद रुइयां पहुंचा। वाल्पोल अपनी सेना लेकर सीधे किले के प्रमुख द्वार पर जा खड़ा हुआ। उसने आसपास के परिसर का मुआयना किये बगैर हमला बोल दिया।

किले के तालुकदार ने पहले ही पर्याप्त सिपाहियों की पलटन तैनात कर रखी थी। दुश्मन की सेना का हमला देखकर उसने तुरंत सिपाहियों को गोलीबारी का आदेश दिया।

इस प्रतिकार से वाल्पोल चकित हुआ। इस लड़ाई में वाल्पोल के सौ सिपाही मारे गये। वाल्पोल ने गलत जगह तोपें रखकर मुसीबत और ज्यादा बढ़ा ली। किले से बहुत दूरी पर तोपें रखी गयी थीं। किले के बजाय वाल्पोल के सिपाही तोप का निशाना बनने लगे। इस गलती के कारण उसके और सिपाही मारे गये।

वाल्पोल रुइयां में रुका था, तब कैंपबेल ने दूसरी पलटन लेकर बरेली की ओर प्रस्थान किया। वह 5 मई को बरेली पहुंचा। कैंपबेल का मुक़ाबला करने की ताकत बहादुर खान के पास नहीं थी। उसने बरेली छोड़ दी। इन घटनाओं के बावजूद रोहिलखंड पर बहादुर खान की पकड़ मजबूत थी। बहादुर खान के सिपाही कैंपबेल की पलटन पर चोरी-छिपे हमले करते रहे। रोहिलखंड के घने जंगलों से बहादुर

खान को खोज निकालना मुश्किल था। कैंपबेल के लाख कोशिशों के बावजूद बहादुर खान का कुछ पता नहीं चला। कैंपबेल ने बहादुर खान का नाम मन से निकाल दिया।

उधर फैजाबाद में एक मौलवी ने कंपनी सरकार के खिलाफ बगावत कर दी। इस मौलवी के बारे में किसी को कोई जानकारी नहीं मिली। लंबा कद, फौलादी हड्डी, पैनी नजर और खूबसूरत दाढ़ी से मौलवी का व्यक्तित्व प्रभावशाली बन पड़ा था। उसकी बोली में जादू था। कोई भी उसकी बोली से तुरंत प्रभावित हो जाता था। इस वजह से उसके आसपास हमेशा लोगों की भीड़ लगी रहती थी। अवध पर कंपनी सरकार का कब्जा होने के बाद नवाब का जीना दूभर हो गया था। हजरत महल नवाब की सबसे खूबसूरत और जवान बेगम थी। वह दरबार की एक मामूली नर्तकी थी। नर्तकी से नवाब की बेगम बनने पर उसका सपना पूरा हुआ था। नवाब के दुर्भाग्य से उसे भी दर-दर भटकना पड़ा।

मौलवी ने फैजाबाद के अपने साथियों को ललकारा-"हम फिरंगियों को अवध से हटा देंगे। अवध की गद्दी पर बेगम के छोटे नवाब को बिठायेंगे।" सभी इस जंग के लिए तैयार हुए। बहादुर मौलवी का साथ पाकर हजरत महल खुश हुई। उसने भी अपने आपको इस मुहिम में झोंक दिया। छोटे नवाब बिराजीस कादर दस वर्ष का छोटा बालक था। अपने लड़के की खातिर वह बागियों के साथ विचार-विमर्श करने लगी।

अवध की स्थिति को देखते हुए मौलवी ने अपना मुकाम रोहिलखंड छोड़कर शाहजहांपुर को बनाया। मौलवी अब शाहजहांपुर से हमला करने लगा। अंग्रेज सेनानी ने मौलवी को कैद करने की पूरी कोशिश की किंतु उनकी कोशिशें नाकामयाब हुईं। अंग्रेजों को डर था कि वह

रोहिलखंड से अवध पहुंच जायेगा। धन की लालच में लोग बेवफा हो जाते हैं। कंपनी सरकार ने मौलवी के नाम पचास हजार रुपयों का इनाम घोषित किया। कंपनी सरकार का साथ देनेवाले जागीरदारों पर मौलवी ने हमले शुरू किये। उसने रोहमर्दा में एक जागीरदार का किला ध्वस्त किया। कंपनी सरकार के पाली स्थित थाने पर कब्जा कर लिया।

बागियों से दुश्मनी करने वाले 'पवयन' के सरदार पर भी हमला बोला गया। मौलवी हाथी पर सवार होकर पवयन सरदार के गढ़ी पर पहुंचा। जागीरदार दरवाजा खोलने के लिए तैयार नहीं था। उसने महावत को दरवाजा तोड़ने की सलाह दी। मौलवी महाद्वार से होकर अंदर प्रवेश कर रहा था। इसी बीच जागीरदार के सिपाहियों ने गोलीबारी शुरू कर दी। एक गोली मौलवी के गर्दन को पारकर निकल गयी। मौलवी बेसुध होकर गिर पड़ा और अल्लाह को प्यारा हो गया।

जागीरदार महल की खिड़की से यह नजारा देख रहा था। मौलवी के प्राण छोड़ते ही जागीरदार ने अपने आदमियों को भेजा। उन्होंने मौलवी का सिर तलवार से काट लिया। मौलवी के सिपाही तितर-बितर हो गये। जागीरदार ने मौलवी का सिर कपड़े में लपेट लिया और शाहजहांपुर जाकर मजिस्ट्रेट के सामने मौलवी का सिर पेश किया। मौलवी के सिर की शिनाख्त होने पर मजिस्ट्रेट ने जागीरदार को पचास हजार रुपयों का इनाम देकर नवाजा। मजिस्ट्रेट के आदेश पर मौलवी का सिर कोतवाली पर लटकाया गया। सबको मौलवी की मौत का यकीन हो गया।

मौलवी की हत्या के बाद रोहिलखंड में शांति छा गयी। कंपनी सरकार के नियंत्रण से अवध अब तक काफी दूर था। अवध के बागी चोरी-छिपे अंग्रेजों पर छोटे-मोटे हमले करते रहे। इन हमलों से अंग्रेज

सिपाही तंग आ गये थे। जब कोई बागी सिपाही हाथ लग जाता, अंग्रेज सिपाही उसे तलवार से काट देते। अंग्रेज सिपाहियों ने कॉलीन कैंपबेल और होप ग्रांट के नेतृत्व में अवध की छानबीन शुरू की। बागी सिपाहियों को मुंह छिपाना मुश्किल हो गया। गांव-गांव जाकर अंग्रेजों ने बागी सिपाहियों की खोज शुरू की। बागियों को मजबूर होकर घर में छिपकर दिन गुजारने पड़े। खौफ के कारण कुछ बागी नेपाल भाग गये।

सभी जगहों पर कंपनी सरकार के खिलाफ बगावत हो रही थी। अवध में हुई सबसे बड़ी बगावत के कारण कंपनी सरकार ने अपनी पूंरी ताकत यहां लगा दी। अन्य जगहों पर भी बगावत होने लगी। अंग्रेज सरकार की परेशानी बढ़ रही थी।

बिहार के कुंवर सिंह ने आजमगढ़ का लश्करी थाना घेर लिया था। थाने के बचाव के लिए मार्क केर को आजमगढ़ भेजा गया। मार्क केर की बड़ी फौज को देखकर कुंवर सिंह ने घेरा उठा लिया। किंतु लड़ाकू बहादुर कुंवर सिंह ने हार नहीं मानी। उन्होंने जान लिया था कि केर की पलटनों का मुकाबला खुले मैदान में करना बहुत मुश्किल है। उन्होंने बिहार के जगदीशपुर के जंगलों में शरण ली। अमर सिंह (कुंवर सिंह के भाई) का मुकाबला करने के लिए मार्क केर ने एडवर्ड लुगर्ड को नियुक्त किया।

जगदीशपुर का जंगली इलाका अंग्रेजों के लिए सिरदर्द साबित हुआ। अमर सिंह के किसानों के पास बंदूकें नहीं थीं किंतु आजादी की इस लड़ाई में किसानों ने हाथों में तलवार उठा लीं। लश्करी थाने पर हमला करते समय उन्हें सावधानी बरतनी पड़ती थी। उन्हें मालूम था कि दुश्मन ताकतवर और हथियारबंद है। इसलिए उन्होंने हमलों के ठिकाने और दिन निश्चित कर लिये थे। बागियों के छापामार दस्ते

के हमलों से लुगर्ड काफी परेशान हुआ। आखिर लुगर्ड की जगह पर ब्रिगेडियर डगलस को भेजा गया। जगदीशपुर के जंगलों में छिपकर कुंवर सिंह और अमर सिंह ने अंग्रेजों को बहुत परेशान किया। कंपनी सरकार को अपनी फौज में बढ़ोतरी करनी पड़ी। डगलस अपने सात हजार सिपाहियों को लेकर जगदीशपुर पहुंचा।

अमर सिंह के सिपाही दिन ढलते ही जंगलों से बाहर आकर लश्करी थाने पर हमला बोल देते। वे छापामार युद्ध में निपुण थे और इस विधि में वे बहुत कम समय में दुश्मन का काफी नुकसान कर देते और भाग निकलते थे। अमर सिंह के सिपाही जान हथेली पर रखकर लड़ रहे थे। उन्हें मालूम था कि दुश्मन के हाथ लगने पर उन्हें तुरंत खत्म कर दिया जायेगा। उनके सामने बहादुर खान का उदाहरण मौजूद था। बहादुर खान सिपाहियों को हमेशा समझाता रहा, "फिरंगी अधिक ताकतवर और शस्त्रसंपन्न हैं। उनके पास अधिक दूरी तक मार करने वाली मैदानी तोपें हैं। इसलिए उनके सामने जाकर कभी भी हमला मत करो। हमला हमेशा पीछे से किया जायेगा। दुश्मन को अधिक आराम करने का मौका नहीं दो। बार-बार लड़ने से तंग आकर वे कमजोर हो जायेंगे।"

अमर सिंह के किसानों को लड़ाई का अनुभव बिलकुल नहीं था। लेकिन चोरी-छिपे हमला कर करके उन्होंने कंपनी सरकार को काफी तंग किया। बिहार की इस बगावत को खत्म करने में कंपनी सरकार को कुंवर सिंह से एक साल जूझना पड़ा।

रोहिलखंड के बाद बुंदेलखंड में भी बगावत हुई। बुंदेलखंड में झांसी प्रमुख शहर था। झांसी के देसी सिपाहियों ने अचानक छावनी में घुसकर अंग्रेजों का कत्ल करना शुरू कर दिया। शहर के सभी अंग्रेज उन दिनों नगरद्वार स्थित किले के पास रहने गये हुए थे।

बागियों ने पहले जेल के कैदियों को रिहा किया। वे सभी नगरद्वार स्थित किले की ओर निकल पड़े।

बागियों को किले के नजदीक आते हुए देखकर अंग्रेज सिपाहियों ने बुर्ज से गोलीबारी शुरू कर दी। बागी सिपाही घायल होने लगे। फिर भी वे पीछे हटने का नाम नहीं ले रहे थे। उनका जोश देखकर किलेदार घबराया और बागियों के शरण में गया। उसने बागियों के सामने एक प्रस्ताव रखा, "किले के लोगों को कोई खतरा नहीं पहुंचना चाहिए, जब तक वे झांसी के बाहर नहीं निकल जाते।"

इस प्रस्ताव पर फैसला करने का काम लक्ष्मीबाई को सौंपा गया। उन दिनों वह झांसी की महारानी थीं। कंपनी सरकार ने उनके दत्तक पुत्र को नामंजूर करके झांसी की गद्दी बरखास्त कर दी थी। रानी लक्ष्मीबाई यह अपमान झेल नहीं सकीं। वह एक स्वाभिमानी और चतुर रानी थीं। उन्होंने जान लिया कि वह अकेली सरकार के खिलाफ नहीं लड़ सकतीं। वह दिल का दर्द कभी चेहरे पर झलकने नहीं देती थीं। उन्होंने यह दर्द तीन साल तक सहा था। इन तीन सालों में रानी ने बहुत कुछ सीख लिया था।

मेरठ में हुई बगावत के बाद एक महीने के भीतर 8 जून को झांसी में बगावत का बिगुल बज उठा। देसी सिपाहियों ने झांसी की रानी से सहायता मांगी। बागियों की बागडोर संभालने के लिए रानी राजी हो गयीं। रानी ने मानो दुर्गा मां का रूप धारण कर लिया। एक कोमलांगी को रौद्र रूप में देखकर पूरे झांसी में जोश छा गया। रानी ने अंग्रेजों को ललकारा-"मैं झांसी नहीं दूंगी।"

सर ह्यूरोज अपनी सेना लेकर झांसी के प्रवेशद्वार पर आ धमका। अब लड़ाई बाकायदा शुरू हो गयी थी। ह्यूरोज की तोपें दस दिनों तक झांसी शहर और किले पर आग बरसाती रहीं। तोप के

बार-बार के हमले से आखिर दसवें दिन किले की दीवार में छेद हो गया। ह्यूरोज ने सोचा कि इसी सुराख से सिपाहियों को किले के अंदर भेजा जाये। लेकिन किले के पहरेदारों ने रातोंरात मरम्मत कर सुराख बंद कर दिया। अंग्रेजों ने फिर एक बार उसी जगह पर तोपें चलायीं। इस बार तोप की मार से दीवार का कुछ हिस्सा ढह गया। ऐसी स्थिति में भी किले की दीवारों के ऊपर दौड़ते हुए रानी ने अपने सिपाहियों का धीरज बढ़ाया। रानी का यह रौद्र रूप देखकर सब चकित हुए। लोगों को रानी की जगह साक्षात् दुर्गा मां नजर आ रही थी। उन्हें अपने सिपाहियों की चिंता थी, सिपाहियों को रानी की।

रानी ने जान लिया था कि वह अंग्रेजों से किला बचा नहीं सकतीं। इसके बावजूद रानी ने हार कबूल नहीं की। अंग्रेज सिपाही अब किसी भी समय किले में पहुंच सकते थे। राानी ने फैसला किया कि वह अपने आपको अंग्रेजों के हवाले नहीं करेंगी। उन्हें बंदी बनकर और बेआबरू होकर जीना पसंद नहीं था। रानी ने सोचा, इससे तो मौत भली। वह सोच ही रही थी कि किले से कहां से छलांग-लगाऊं, तभी किले के नजदीक एक टीले पर धुआं नजर आने लगा। वह तात्या टोपे का इशारा था। रानी के सिपाही खुश हुए।

श्रीमंत नाना साहब के रसोई में तात्या टोपे रसोइया (महाराज) था। लेकिन इस जिंदादिल आदमी को कोई लालच नहीं था। ईमानदार तात्या टोपे श्रीमंत नाना साहब को फिर एक बार राजसिंहासन पर विराजमान होते हुए देखना चाहता था। इसी मुहिम पर तात्या ने अपने प्राण निछावर कर दिये थे। नाना साहब के निर्जनवास स्वीकारने के बाद तात्या टोपे खाली नहीं बैठा। इसी बहादुर सिपाही ने लड़ाई में जान फूंकी। उसने अंग्रेजों के खिलाफ बीस हजार सिपाहियों की फौज खड़ी कर दी। अंग्रेजों के ठिकानों पर हमलों की संख्या बढ़

गयी। उन्हें खबर मिली कि झांसी की रानी मुसीबत में फंस गयी हैं। वह तुरंत उनकी रक्षा करने दौड़ पड़ा।

ह्यूरोज ने झांसी शहर की मजबूत घेराबंदी की थी। उसने बेतवा नदी के किनारे कुछ टुकड़ियां तैनात कीं। अब तात्या टोपे को रोकना आसान हो गया था। तात्या टोपे के सिपाही नदी के उस पार से अंग्रेजों पर गोली दागने लगे। ह्यूरोज ने गोली का जवाब तोप से दिया। तात्या को आगे बढ़ना मुश्किल हो गया। कुछ ही दिनों के भीतर तात्या टोपे को बेतवा नदी का किनारा छोड़ना पड़ा। तात्या के हट जाने से ह्यूरोज को जोश आ गया। 2 मार्च को झांसी पर चढ़ाई के लिए वह फिर तैयार हुआ। ह्यूरोज झांसी की रानी को गिरफ्तार करने के लिए बेसब्र था।



अब रानी का किले में रहना खतरे से खाली नहीं रह गया था। घोड़े पर सवार रानी ने रात को किलेबंदी की दीवार से छलांग लगा दी। अंग्रेज सिपाहियों का घेरा तोड़कर रानी शहर से बाहर निकल पड़ीं। अब वह कालपी पहुंच गयीं। वहां रानी को खबर मिली कि ह्यूरोज उसे पकड़ने बड़ी फौज के साथ आ रहा है। उन्होंने कालपी छोड़कर ग्वालियर के पास गोपालपुर में शरण ली। वहां उनसे तात्या टोपे आकर मिला। ग्यारह हजार सिपाहियों की फौज और बारह तोपें लेकर रानी ग्वालियर की ओर निकल पड़ीं। बीच रास्ते में ही 'कोटे की सराय' में रानी की फौज अंग्रेज सिपाहियों के साथ भिड़ गयी। वहां घमासान लड़ाई हुई। दोनों तरफ के सिपाही घायल हो रहे थे। हर सिपाही में लड़ाई का जोश भर गया था।

अपने सिपाहियों का धीरज बंधाती हुई रानी मैदान में दौड़ रही थीं। अचानक रानी को एक गोली लगी। खून की धारा बह निकली। जख्मी रानी घोड़ा लेकर मैदान से बाहर आ गयीं। एक आश्रम के बैरागियों ने उनका दवा-पानी किया। फिर भी रानी के जख्मों से खून बहना जारी रहा। वह बेहोश हो गयीं। कुछ ही समय बाद झांसी की उस मर्दानी वीरबाला रानी लक्ष्मीबाई के प्राणपखेरू उड़ गये। सूरज ढल रहा था। इसी समय आश्रम के पास चार-छह बैरागियों के सामने रानी के पार्थिव देह को अग्नि को समर्पित किया गया। वह दिन था- 17 जून 1858। एक बिजली आसमान में विलीन हो गयी।

रानी की मौत की खबर सुनकर तात्या टोपे ने ग्वालियर छोड़ दिया। वह चंबल में राजपुताना चला गया। तात्या को उम्मीद थी कि राजपूत उसकी सहायता जरूर करेंगे। लेकिन राजपुताना का कोई नरेश कंपनी सरकार से विद्रोह करने को तैयार नहीं था।

तात्या के पास अब बहुत कम सिपाही बच गये थे। उसके पास

कोई दौलत नहीं बची थी, जिसके जोर पर वह सिपाहियों की भरती कर सके। इसके बावजूद बहादुर तात्या टोपे अंग्रेज फौज पर हमले करता रहा। तात्या टोपे कंपनी सरकार के हाथ नहीं लग रहा था। अंग्रेजों ने हमेशा की तरह तात्या टोपे को पकड़नेवाले को इनाम घोषित किया। इस प्रमुख बागी को पकड़ने की सूचना सभी गांवों में फैला दी गयी।

मान सिंह ग्वालियर सल्तनत के नरवर रियासत का जागीरदार था। वह उन दिनों सिंधिया के खिलाफ हरकतें कर रहा था। इसलिए सिंधिया ने उसकी जागीर अपने कब्जे में कर ली थी। ग्वालियर इलाके में तात्या टोपे की भेंट मान सिंह से हुई। तात्या को मालूम हुआ था कि मान सिंह और सिंधिया के बीच दरार पड़ गयी है। राजपुताना घूमते समय तात्या को एक दिन मान सिंह का बुलावा आया-

"कृपया भेंट करें। कुछ जरूरी बातें करनी हैं।" सिंधिया पर खफा हुआ जागीरदार तात्या की सहायता करना चाहता था, यह सुनकर तात्या को आश्चर्य हुआ। लेकिन इन हालात में तात्या लाचार था। वह किसी भी छोटी-सी मदद की ओर ताक रहा था। इसलिए तात्या नरवर पहुंच गया।

मान सिंह ने तात्या का स्वागत गर्मजोशी के साथ किया। दोनों में विचार-विमर्श हुआ। मान सिंह ने तात्या को खबर दी कि रोहिलखंड का बागी फीरोजशाह चढ़ाई की तैयारी कर रहा है। यह सुनकर तात्या को खुशी हुई। इसका मतलब सब कुछ खत्म नहीं हुआ था। तात्या मान सिंह की बातें ध्यान से सुन रहा था।

रात होने पर मान सिंह ने तात्या से कहा, "अभी बहुत कुछ तय करना है। हम सुबह बातें करेंगे।" तात्या की आंखें थकान से बोझिल

हो गयी थीं। उसे गहरी नींद लगी। बहुत दिनों बाद एक अच्छी खबर सुनने को मिली थी। गहरी नींद के बीच अचानक तात्या को किसी ने झकझोरा। अब भी नींद खुली नहीं थी। उसे मालूम नहीं हुआ कि वह सपना देख रहा है या हकीकत। उसके सामने आठ-दस हथियारबंद अंग्रेज सिपाही खड़े थे। जल्द ही उसे सभी बातों का खुलासा हुआ। तात्या मान सिंह को ढूंढ रहा था। लेकिन नरवर का नरेश मान सिंह उसे धोखा देकर भाग निकला था। तात्या को मुंह दिखाने की हिम्मत मान सिंह में अब कहां बची थी ?

जिस तात्या को कंपनी सरकार साल भर से ढूंढ़ती रही थी, आखिरकार वह एक देसी नरेश के धोखेबाजी और विश्वासघात की वजह से पकड़ा गया। मान सिंह की लालच ने तात्या को अंग्रेजों की कैद में डाल दिया।

अंततः तात्या टोपे को 18 अप्रैल 1859 के दिन सिपर्डा में फांसी पर लटका दिया गया। तात्या को फांसी का आदेश पढ़कर सुनाया गया। मेजर रीड ने उसकी आखिरी इच्छा पूछी -

"तात्या, आपकी अंतिम इच्छा क्या है?"

"सिर्फ एक। कृपया मेरे घरवालों को सताइये मत। इस बगावत के साथ उनका कोई सरोकार नहीं है। मैं कंपनी सरकार का गुनहगार हूं। जो कुछ भी मैंने किया, उसके साथ घरवालों का संबंध नहीं है।"

इसी घटना से असंतोष का बीजारोपण हुआ था। विदेशी हुकूमत के खिलाफ उठे जनांदोलन में तात्या टोपे का बलिदान महत्वपूर्ण रहा।

8 अप्रैल 1857 को मंगल पांडे को फांसी पर लटकाया गया था। उसी दिन से आजादी की पहली लड़ाई शुरू हो गयी थी। आजादी के इस पहले यज्ञकुंड में अंतिम आहुति तात्या टोपे ने दी। यह सच था कि यह विद्रोह असफल रहा। लेकिन इस विद्रोह का महत्व कम नहीं

हुआ। यह आजादी की पहली लड़ाई का पड़ाव था। आजादी के लिए निरंतर लड़ने की प्रखर प्रेरणा आनेवाली पीढ़ी को मिल गयी। असफल संग्राम ने सफलता के बीज बो दिये थे।

शिवम् ऑफसैट प्रेस, ए-12/1, नरायणा इंडिस्ट्रियल एरिया, फेज-I, नई दिल्ली 110 028 द्वारा मुद्रित